"वाराणसी स्थित संत रविदास मंदिर : उत्तर भारत में दलितों का स्वतंत्रोत्तर काल में धार्मिक परिवेश

लघु शोध प्रबन्ध

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय से इतिहास

विषय में एम0 फिल0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

मास्टर ऑफ फिलॉसफी

(एम0 फिल0)

शोधार्थी

आरती शर्मा

नामांकन सं0–519/17

शोध निर्देशिका

प्रो0 शूरा दारापुरी

इतिहास विभाग

अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

विद्या विहार, रायबरेली रोड, लखनऊ,उ0प्र0

2019

बबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
विद्या विहार, रायबरेली रोड,
लखनऊ–226025

BABASAHEB BHIMRAO AMBEDKAR UNIVERSITY
(A Central University)
Vidya Vihar, Raebareilly Road,
Lcuknow - 226025

Letter No. ………………
Date : …………........

प्रमाण–पत्र

आरती शर्मा अनुक्रमांक सं0 136036 नामांकन संख्या 519/17 बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार, रायबरेली रोड, लखनऊ से मास्टर ऑफ फिलॉसफी (इतिहास) विषयान्तर्गत ''वाराणसी स्थित संत रविदास मंदिर : उत्तर भारत में दलितों का स्वतंत्रोत्तर काल में धार्मिक परिवेश'' उपाधि का शोध प्रबन्ध परीक्षाणार्थ अग्रसारित किया जा रहा है।

दिनांक-

शोध निर्देशिका
प्रो0 शूरा दारापुरी

विभागाध्यक्ष
प्रो0 विक्टर बाबू

घोषणा–पत्र

मैं **आरती शर्मा** घोषणा करती हूँ कि शोध प्रबन्ध जिसका शीर्षक **''वाराणसी स्थित संत रविदास मंदिर : उत्तर भारत में दलितों का स्वतंत्रोत्तर काल में धार्मिक परिवेश''** का **निर्देशन** **प्रो0** शूरा दारापुरी के इतिहास विभाग, अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, विद्या विहार, रायबरेली रोड, लखनऊ से मास्टर ऑफ फिलॉसफी (इतिहास) उपाधि हेतु प्रस्तुत किया गया है। उक्त शोध प्रबन्ध मौलिकता पर आधारित है। उक्त शोध प्रबन्ध शीर्षक से संबधित विषय पर किसी भी विश्वविद्यालय व संस्थान द्वारा उपाधि/डिप्लोमा हेतु स्वीकृत नही किया गया है।

दिनांक :–

शोधार्थी

आरती शर्मा

अनुक्रमांक नं0 :**136036**

नामंकन सं0 : **519/17**

इतिहास विभाग,

अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर

विश्वविद्यालय, लखनऊ

आभारोक्ति

इस शोध प्रबंध को पूर्ण करने में मुझे बहुत से सुयोग्य विद्वानों व व्यक्तियों का बहुमूत्य सहयोग एवं स्नेह प्राप्त हुआ। जिनकी मैं सदैव आभारी रहूंगी और जिनका आभार प्रकट करना, मैं स्वयं (दायित्वधीन) अपना नैतिक कर्तव्य समझती हूँ। सर्वप्रथम मैं प्रस्तुत शोध–प्रबंध की **शोध निर्देशिका प्रो0 शूरा दारापुरी** इतिहास विभाग, अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ के निर्देशन, पर्यवेक्षण से इस शोध कार्य को पूर्ण किया हैं, के प्रति श्रद्धापूर्ण सहृदय आभार प्रकट करती हूँ। जिन्होंने यथासंभव मेरा कुशल मार्गदर्शन किया। इसके साथ ही मैं, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ के इतिहास विभाग के सभी सदस्यों, **विभागाध्यक्ष, प्रोफेसर एस. विक्टर बाबू, डॉ वी.एम.रवि कुमार, डॉ सिद्धार्थ शंकर राय एवं डॉ रेनू पाण्डेय** की हृदय से आभारी हूँ, जिनके स्नेह एवं सौहार्दपूर्ण व्यवहार व विद्वतापूर्ण निर्देशन से यह कार्य समय से पूर्ण हो सका। मैं सहृदय इनके सहयोग की प्रशंसा करती हूँ। इसी के साथ मै सेवानिवृत पूर्व आई0जी एस0 आर0 दारापुरी को विशेष सहयोग के लिए सहृदय धन्यवाद देती हूँ।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध हेतु शीर्षक के चयन से लेकर शोध कार्य पूर्ण करने तक स्नेह व प्रेरणापूर्ण मार्ग दर्शन करने में इतिहास विभाग की सुयोग्य विद्वान **प्रो0 शूरा दारापुरी** जी की हृदय से आभारी हूँ। जिनके प्रेरणापूर्ण मार्गदर्शन से इस शोध कार्य को समयान्तर्गत पूर्ण करने में बहुमूल्य सुझाव व प्रोत्साहन मिला, जिसकी मैं आजीवन चिरऋणी रहूंगी।

मैं अपने पूज्यनीय माता श्रीमती रीता देवी एवं पिता श्री जगदीश प्रसाद शर्मा की सदैव कृतज्ञ रहूंगी, जिन्होंने आदर्श शिक्षा, उत्तम विचार व संस्कार दिए है।

आरती शर्मा

समर्पित

पूज्यनीय

स्वर्गीय दादी–दादा,

और

माता–पिता

व

समस्त गुरूजनों

के चरणों मे

सादर अर्पित

प्राक्कथन

समाज के दोहरे रूप का दर्शन करना किन्ही सन्दर्भो में भले ही अच्छा होता हो परन्तु जाति भेद को लेकर यह भेद उचित नहीं समझा जाता है।

सवाल मात्र भेदभाव का नहीं है, सवाल मानव का मानव से किसी भी कार्य क्षेत्र में होने वाले भेद से है। संत शिरोमणी रविदास जी महाराज असीम ज्ञान के सागर से भरे हुए थे इसके बावजूद भी उन्होने समाज द्वारा अपने प्रति जो असमानता देखी वह किसी भी भाषा मे और किसी भी रूप मे सराहनीय नहीं थी।

हमको आभारी होना चाहिए संत रविदास जी का जो अपने ज्ञान से हमें हमेशा विभूषित करते रहते है उनके द्वारा किए गए कार्यो ने आज भी व्यक्ति को समाज और मानव के प्रति एकता और सद्भावना का संदेश दिया।

शोधार्थी यह आशा करती है कि उसके द्वारा किया गया शोध कार्य भविष्य मे शोध करने वाले शोधार्थी को सहायता प्रदान करेगा।

दिनांक –

आरती शर्मा

विषय सूची

घोषणा–पत्र

प्रमाण–पत्र, संकाय प्रमुख

आभारोक्ति

समर्पित

प्राक्कथन

विषय–सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अध्याय 1 – **प्रस्तावना** 9–17

अध्याय 2 – **स्वतंत्रता के पश्चात् उत्तर भारत के धार्मिक परिवेश में दलितों की स्थिति** 18–29

अध्याय 3 **रैदासिया धर्म की पृष्टभूमि** 30–45

- डेरा सच्च खण्ड तथा ट्रस्ट के कार्य
- डेरा प्रमुख के कार्य

अध्याय 4 – **संत रविदास मन्दिर का चित्रण** 46–56

- साक्षात्कार के द्वारा

अध्याय 5– **मन्दिर के निर्माण संघर्ष की जानकारी** 57–71

- मन्दिर द्वारा दी जाने वाली सेवाएं

अध्याय 6 – **निष्कर्ष** 72–84

शीर्षक

“वाराणसी स्थित संत रविदास मंदिर : उत्तर भारत में दलितों का स्वतंत्रोत्तर काल में धार्मिक परिवेश”

अध्याय–1

प्रस्तावना

इस बात से हम सब अवगत है कि हमारे भारतीय समाज में दलित शब्द का अर्थ क्या है दलित वो है, जो पहले अपने कार्यों के अनुसार अस्पृश्य था और अब अपनी जाति के अनुसार अस्पृश्य है अस्पृश्यता से तात्पर्य हम अछूत से मानते है अर्थात् वह व्यक्ति जो अपने निम्न कार्य के कारण अन्य लोगों को छूने या उनके साथ उठने–बैठने का योग्य नहीं है।

भारत वर्ष में आर्य चार वर्णों में विभक्त थे। अर्थात ब्राह्म्ण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र है केवल इन बातों से शुद्र के प्रश्नों को जटिलता और गहनता प्रकट नहीं होती, यदि समाज केवल 4 वर्णों में विभक्त रहता तो चतुर्वर्ण व्यवस्था में आपत्ति नहीं होती। आभाग्य से चतुर्वर्ण में बहुत रहस्य छिपा है। चातुर्वर्ण से नीच ऊंच की भावना बढ़ती है[1]

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या में लगभग 16.6 प्रतिशत या 20.14 करोड़ आबादी दलितों की है[2]

इस शोध के विषय के अनुसार दलितों के स्थिति पर प्रकाश डालना अति आवश्यक है साथ ही उस महान व्यक्ति के बारे में भी लोगों को जानकारी देना है, जो दलितों के लिए उनके उद्धारक के रूप में प्रकट हुए उनके शिक्षा, वचन, संस्कार तथा सहज कार्यों ने दलितों को उनके कार्यों तथा जाति के अधीन रहकर शोषित होने के बजाव अपनी स्वतंत्रता तथा समानता के अधिकार से जीवन यापन करने का संदेश दिया।

आज भारत में हिन्दू धर्म की लगभग 4,635 जातियों में से 3,527 जातियां स्वर्ण हिन्दू हैं तथा 1108 जातियाँ अस्पृश्यो की है।[3] इन आंकड़ों से ज्ञात होता है

---

[1] प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति
[2] विकीपीड़िया
[3] http://en.m.wikipedia.org

कि हम भले ही संख्या में वर्णों सें कम है परन्तु जीवन जीने के हमारे अधिकार समान है।

दलित मात्र एक शब्द नहीं है यह वह वर्ण विशेष या जाति विशेष है जो वर्षो से अछूत, शोषित एवं दबी कुचली गई है। जिसका उल्लेख हमारे धार्मिक स्रोंतो में भी हुआ है। यह शब्द वर्ण प्रणाली या वर्ण व्यवस्था का ही आधुनिक रूप है, जो वर्षो पूर्व हमारी ज्ञानी महात्माओं ने वेदो में रचा था। उसी में सर्वप्रथम वर्ण व्यवस्था शब्द तथा स्थिति का उल्लेख मिलता है।

ऋग्वेद के पुरूष सुक्त में इसे बताया गया है कि जिसके अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र से ये मानव जाति को बांटने वाले 4 वर्ण आधार है। इसके तहत युग पुरूष की मुख से ब्राह्मण का जन्म हुआ, क्षत्रिय का जन्म इनकी भुजाओं से, वैश्य का जन्म जंघावों से तथा अन्त में शुद्र जाति का जन्म इनके पैर के अंगूठे से हुआ अर्थात् **ब्राहमण** का कार्य होगा विद्या देना तथा विद्या को ग्रहण करना, क्षत्रिय का कार्य भुजा बल से लोगों की रक्षा करना, वैश्य का जन्म व्यापार करने के लिए हुआ तथा शुद्र का जन्म अपने से ऊँचे इन तीनो वर्णों की सेवा करने के लिए हुआ था।[4]

इससे ज्ञात होता है कि भारतीय समाज में भेदभाव पूर्ण व्यवहार तथा ऊँच नीच की खायी के बीज वर्षो पूर्व ही बो दिये थे।

ऋग्वेद में 'वर्ण' शब्द रंग के अर्थ में तथा कहीं–कहीं व्यवसाय चयन के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ हैं। आर्यों को गौंर वर्ण तथा दासो का कृष्ण वर्ण कहा गया है।[5]

प्राचीन समय से लेकर आजादी के वर्ष तक दलितों की स्थिति में कई उतार–चढ़ाव तो आये परन्तु ये उतार–चढ़ाव कभी दलितों को सभी सामाजिक और धार्मिक स्थिति को सुधारने में पूर्णतः सफल नहीं हो पायें प्राचीन समय में जहाँ शुद्र का कार्य सेवक के रूप में बंटा था जिसे वह किसानो के मजदूर, चाण्डाल,

[4] ऋग्वेद 1.116
[5] प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, पृष्ठ 11

सेवक, नौकर, जमादार, मोची, धोबी, इत्यादि थे। ऋग्वेद में यह वर्ण व्यवस्था पूर्णतः कर्म आधारित थी जिसके बाद संत रबिदास जी ने लिखा भी है कि

"रविदास जन्म के कारणे, होत न कोई नीच।
नर को नीच करि डारि है, ओछै करम की कीच।।"

अर्थात "जन्म से कोई नीच नहीं होता मनुष्य को खोटे कर्मों का कीचड़ नीच बना डालता है।"

हमें किसी से जाति आधारित भेद–भाव नहीं करना चाहिए और न ही कर्म आधारित वह हर व्यक्ति देव तुलय है जो मेहनत करता है और परिवार का भरण–पोषण करता है। मध्य काल आते–आते इनकी स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ बल्कि कार्यों से सीमित होने के कारण या आर्थिक रूप से अत्यन्त कमजोर हो गये, राजाओं तथा विदेशी आक्रमणकारियों के अधीन होकर इन्हें शोषित ही किया गया मध्यकाल के अन्त और अंग्रेजी शासन की शुरूआत में इनकी स्थिति और भी दयनीय हो गई थी। इन पर पड़ने वाले लगाने के खर्च इतने अधिक थे कि वे स्वयं को लिए दो वक्त की रोटी का प्रबन्ध करने में सक्षम न रह सके।

किसान वर्ग तथा भूमि पर काम करने वाले खेती हर मजदूर जमीदारों से अत्यधिक लगान वसूली के कारण कुचले जा रहे थे। इसके विद्रोह में कई किसान युद्ध तथा जनजातीय युद्ध हुए। तिनकठिया विद्रोह, संथाल विद्रोह, मुण्डा विद्रोह, इत्यादि इन स्थितियों के विद्रोह के उदाहरण हैं सूत्र काल से ज्ञात होता है कि चाण्डल अस्पृश्य माने–जाने लगे, जो नगर के बाहर निवास करते थे। वर्ण कठोर होकर जाति में बदल गये जिनका आधार अब कर्म न होकर जन्म माना गया इनके अन्तर्वर्ण विवाह एवं खान–पान से स्पष्ट रूप से प्रतिबन्ध लगा दिया।[6]

ऐसी स्थिति जब स्वयं हिन्दू जाति के स्वर्ण हिन्दू अपने ही बनाये नियमों के आधार पर वर्ण में शुद्र के निम्न स्थान देकर उन पर शोषण करना वैद्य मानने लगे तो यह बहुत आवश्यक हो गया है उनका उद्धार किया जाय स्वतंत्रता से पूर्ण और बाद में दोनो ही स्थितियों में दलितों की स्थिति में जो बदलाव आये उनका वर्णन हम आगे करेंगे।

[6] काणेः हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, भाग–1, पृष्ठ–11

एक उद्धारक की आवश्यकता के रूप मे संत रविदास–

दलितो को ऐसे में आवश्यकता थी ऐसे हाथ की जो उनको इस दल–दल से निकाल कर ऐसे स्थान पर पहुचा सके जहाँ उनका सम्मान हो, खाने–पीने, रहने, धार्मिक और सामाजिक स्तर पर संमानता का स्थान मिल सके। ऐसे में महान सन्तों में अग्रणी, जिन्हे अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान किया। इनकी रचनाओं की विशेषता लोक वाणी का अछूत प्रयोग रही है मधुर एवं सहज संत शिरोमणि रैदास की वाणी ज्ञानाश्रयी होते हुए भी ज्ञाना श्रयी एवं प्रेमाश्रयी शाखाओं के मध्य सेतु की तरह है।

रविदास जी अपने आप में किसी चमत्कारी से कम नहीं थे। चमार जाति से होने के बावजूद यदि कोइ सामान्य सा व्यक्ति ऐसे महान कार्य करे तो हम उसे किसी आजूबे कम नही कहेगे। परन्तु संत रविदास जी गुरू महाराज अपने समय में इन आध्यात्मिक गुणो के साथ–साथ चमत्कारिक होने के बाड भी इतने साल स्वभाव के थे जिसका वर्णन करना मुश्किल हो।

संत रविदास जी

वे अपने विरोधियो की अज्ञानता को दूर करने के लिए ऐसा ज्ञानमार्गी संदेश देते थे कि बडे–बडे बुद्धिजीवी उनकी इस प्रखर बुद्धि का अन्त नहीं पा सके वे चाहते थे कि रविदास उनके ज्ञान को माने परन्तु ऐसा कभी सम्भव नहीं हो पाया कि रविदास जी को वे तर्क–वितर्क द्वारा कभी काट ही नही पाए। उनकी चमार जाति कभी भी उनके ज्ञान के आगे नहीं आयी, लोगो ने उन्हे बहुत कुछ बुरा–भला कहा, परन्तु वे

निडर होकर अपना काम करते तथा अपने पास आए लोगो को ज्ञान देते उन्होंने कभी न तो स्वयं किसी भी प्रकार का भेद भाव किया और न ही किसी के भेद–भाव को माना।

वे कहते थे कि प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र जन्मा है और स्वतन्त्र ही मृत्यु को प्राप्त होगा।

वे कहते थे कि शील की–

शील की रापी ज्ञान का कॉटा।

चाम की पन्नी प्रेम का टाँका।।

अर्थात– अपनी शीलता की रापी से रविदास जी अपने विरोधियों की अज्ञानता को काट देते थे, तो फिर अपने शुद्ध ज्ञान के कॉटे से चाम की पन्नी लगाकर प्रेम का ऐसा टॉका **लगा लेते** थे कि वह **हमेशा** के लिए उनके हृदय से जुड़कर उनके हो जाते थे।

स्वयं भी चमार जाति से जुड़े हुए होकर भी उन्होने अपने ज्ञान के प्रकाश से समस्त शुद्र जाति को ही नही **अपितु** उन सभी लोगों को समानता तथा स्वतन्त्रता का मार्ग दिखया जो किसी न किसी रूप में शोषित ही होते थे।

रविदास जी ने अपने उपदेश में कहते है

''नीच न कोई जाति, नीच न कोई गांम'

नीच ताहि को जानिए, नीच करे जो काम''।

''अर्थात् न कोई जाति नीच है न कोई गाँव नीच है, नीच उसे ही मानता चाहिए जो नीच कर्म करता है।"[7]

गुरू रविदास जी का जन्म काशी में माघ पूर्णिमा के दिन रविवार को संवत् 1433 विक्रमी संवत् सन् 1377 ई0 को हुआ था। उनके जन्म के बारे में एक दोहा प्रचलित है।

''चौदह से तैतीस कि माघ सुदी पन्दरासा।

दुसियों के कल्याण हित प्रगटे स्त्री रविदास।''[8]

[7] रविदास जी का जीवन चरित्र और रविदास वचनामृत

रविदास जी वाराणसी स्थित ग्राम "सीर गोवर्धनपुर" में हुआ था[9] ये जाति से चमार थे। तथा अपना पैतृक कार्य चमड़ा सिलने का कार्य करने लगे अर्थात् इनके पिता को जूता सिलने का कार्य था। जिसे रविदास जी ने आगे बढ़ाया। वे बहुत ही तीव्र बुद्धि के बालक थे उन्होने बचपन में जाति को लेकर अपमानित होना पड़ा था यह उनके लिए ऐसी स्थिति थी, जब वे समझ न सके कि उन्हें केवल जाति से चमार होने के कारण विद्यालय से निकाला जा रहा है तब उन्होने विवश होकर घर से ही पढ़ाई की, परन्तु जल्दी ही गरीबी के कारण उनकी ये पढ़ाई भी छूट गयी और वे अपने पिता के साथ जूते सिलने के कार्यों में लग गये।

परन्तु प्रखर बुद्धि तथा व्यवहार ने उनकों लोगों के साथ जोड़ा। वे अपने कार्यों के प्रति पूर्ण निष्ठा रखते थे, एक बार गंगा स्नान करते समय कुछ ब्राह्मम्णों के पूछने पर अपना परिचय देते समय कहा कि ''मेरी जन्म जाति कुठबंठला चमार है और मै शुद्र वर्ण में जन्मा हूँ।'' ऐसा कहा तो ब्राह्मणों द्वारा उन्हे जाति को लेकर बहुत अपमानित होना पड़ा।[10] अपने ज्ञान को उन्होने बहुत समृद्ध बनाया और लोगों को अपने दोहो के माध्यम से ज्ञान प्रदान किया। वाराणसी स्थित उनकी जन्म स्थान ''सीर गोवर्धन'' में आज भी उनके द्वारा उपयोग किए हुए जूते मिलने के उपकरण को रखा गया है[11] जो उनकी वास्तविकता को दिखाया है और यह सिद्ध करता है कि वे चमड़े का जूता सिलकर अपना जीवन निर्वाह किया करते थे।

ऐसा माना जाता है रविदास बचपन से ही चमत्कारिक प्रवृत्ति के संत के रूप में जाने जाते थे तथा कुछ पुस्तके एवं पत्रिकाएं भी उनके चमत्कारिक होने का प्रमाण देती है परन्तु यह कहना कही भी अनुचित नही होगा कि रविदास जी का जन्म'' धरती पर सत्सगं का प्रचार करने और शुद्र जाति का उद्धार करने हेतु हुआ था। उनका जीवन परमार्थ के लिए ही था। उनकी वाणी इतनी सरल तथा हितकारी थी कि सत्संग द्वारा लोग उनके समीप खिचे चले आते थे। उन्होने अपने भक्तों से

---

[8] विकीपीड़िया

[9] अमृतवाणी

[10] रविदास जी का जीवन चरित्र और रविदास वचनामृत, पृष्ठ 24

[11] साक्षात्कार द्वारा

अपील करी कि वे माँस–मदिरा का सेवन न करे और न ही जीव हत्या करें। क्योंकि सभी में एक प्राण ज्योति व्याप्त है।[12]

धीरे–धीरे संतो के प्रयासो से दलितों की स्थिति में सुधार देखे गए परन्तु ये सुधार पूर्ण नही थे, मध्यकालीन युग के बाद भारत में धीरे–धीरे भक्ति आन्दोलन के माध्यम से उत्तर और दक्षिण में होने वाले संतों की मदद से धार्मिक विषमताएं तथा जातीय विशमताएं कुछ कम हुई परन्तु समाप्त न हो सकी।

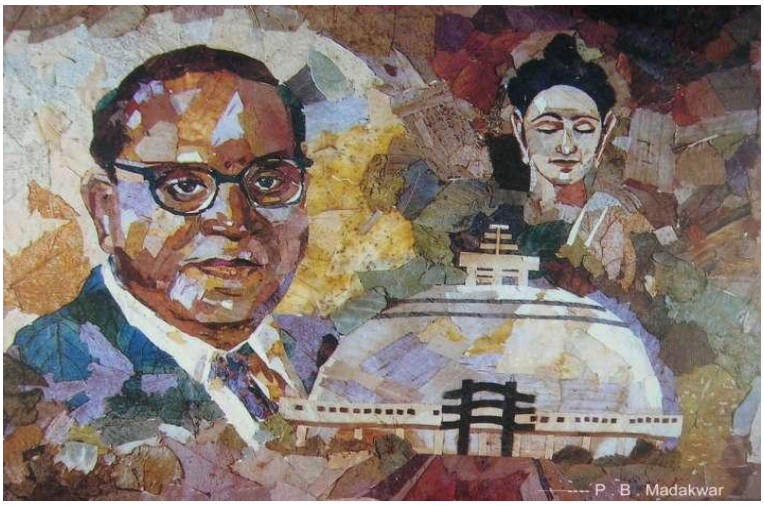

<u>डॉ. अम्बेडकर जी का योगदान–</u>

आधुनिक काल आते–आते तक दलितों के उद्धारक के रूप में डॉ0 भीम राव अम्बेडकर का योगदान भी सराहनीय है, इनका उद्देश्य भी रविदास जी से भिन्न नहीं था, परन्तु ये भगवान पर विश्वास नहीं करते थे अर्थात् ये दलितों की स्थिति का एक मुख्य कारण ब्राह्मणों की भगवान प्रिय होने की भावना को मानते थे। परन्तु इनका उद्देश्य शुद्रों को समाज में उच्च स्थान दिलाना नहीं बल्कि समानता का अधिकार दिलाना था, उन्हें किसी भी प्रकार से चाहे वो सामाजिक हो, आर्थिक या धार्मिक अछूत न समझें।

<u>अस्पृश्यता का प्रश्न वर्ग कलह का प्रश्न है–</u>

अपने आपको स्पृश्य और दूसरों को अस्पृश्य मानने वाले दो वर्गों के बीच के संघर्ष का प्रश्न है जो लोग अपने आपको पवित्र और हमें अपवित्र मानते है, उनकी

[12] रविदास जी जीवन चरित्र और रविदास वचनामृत,पृष्ठ–20

मान्यता के अनुसार यह ऊँच–नीच की व्यवस्था सनातन है, अर्थात् वे सदा पवित्र माने जाते रहने चाहिए और हम सदा अपवित्र, वे सदा ऊँचे बने रहे और हम सदा नीचे।[13]

डॉ. अम्बेकर जी कहते थे कि व्यक्ति का मूल्यांकन उसकी जाति से न होकर उसके कार्यों और शिक्षा से होने पर विशेष बल दिया स्वयं भी शूद्र परिवार में जन्म लेने के बावजूद वे प्रखर बुद्धि के बालक थे और शायद शुद्रों में वे ही प्रथम व्यक्ति थे जो उच्च शिक्षा ग्रहण करने विदेश गये थे। परन्तु वापस ''अपने देश आकर अस्पृश्यता तथा शोषण की ऐसी तस्वीर देख उनका हृदय दुख से भर गया।'' शुद्रो को पानी, खाना, रहना, शिक्षा तथा जीवन यापन के कार्यों, सभी में दूसरों से दूर और अलग–अलग रखा जाता था ये वो स्थिति थी जब उच्च शिक्षित व्यक्ति के साथ भी, उनकी शिक्षा देखकर नही बल्कि उसकी जाति देखकर व्यवहार किया जाने लगा। तब डॉ0 अम्बेडकर ने भारत के शुद्रो को उनका सम्मान तथा अधिकार दिलाने के भरसक प्रयास किए।[14]

इससे चुनाव में आरक्षण से लेकर विद्यालय में शिक्षा, अस्पताल में इलाज, रहने का अधिकार, कुए के पानी पर सबका अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया। संविधान निर्मात्री सभा के अध्यक्ष बन उन्होने जिस संविधान की रचना की, वह आज सर्वोच्च है जिसका पालन हर भारतीय के लिए अति आवश्यक है इसमें उन्होने सम्पूर्ण भारत वर्ष में रहने वाले लोगों को समानता से अधिकार वितरित किए न किसी को ज्यादा और न किसी को कम जो आज तक सामाजिक, आर्थिक रूप से सुचारू रूप से चले आर रहे। संविधान को दुनिया में भी आदर्णीय स्थान दिलाया है।

अतः हम आगे भारतीय शुद्रो की जो आज दलित के नाम से एक जाति वर्ग विशेष में बदल चूके है उनके अधिकारों, स्थिति तथा धार्मिक परिपेक्ष पर प्रकाश डालेगें। स्वतन्त्रता के पूर्व जो स्थिति थी वह कुछ हद तक शोषित होने वाली थी क्योंकि इसमें हम देखते है कि जिस तीव्रता से शोषण हुआ। उस तीव्रता से उसका विस्तार नहीं हुआ अर्थात् लोगों ने एक हद तक शोषित होना अपनी किस्मत का

[13] भारत रत्न डॉ. भीम राव अम्बेडकर, पृष्ठ–1
[14] दलित दस्तक पत्रिका

एक अंग मान लिया था। परन्तु धीरे–धीरे समय के साथ–साथ हिन्दुस्तान में बदलते भारत में लोगों की सोच में भी परिवर्तन आया और कुछ हद तक शोषक और शोषित दोनों ही वर्गों में, तत्कालीन परिस्थितियों के वशीभूत कुछ बदलाव आए।

हालांकि ये बदलाव कुछ समय के ही थे और आज भी हमे जब भारत के किसी कोने में दलित व्यक्ति के शोषित होने की कोई खबर सुनते है तो यह बात सोचने पर मजबूर हो जाते है कि "वर्षों बाद भी जब हमारा देश दिन–दुगनी रात चौगुनी तरक्की कर रहा है तब भी हमारे देश का एक शोषक और एक शोषित वर्ग इस रूढ़िवादी जाति बंधन में बधे है, जहाँ आज भी एक दलित कुलीन व्यक्ति के घर के सामने से गुजरे तो अपने जूते सर पर रख कर चले, एक दलित अपनी शादी पर घोड़ी पर न चढ़े एक दलित कन्या या युवक किसी उच्च वर्ग में विवाह न कर लें। आज भी शादी होने से पूर्ण जाति का ज्ञान होना आवश्यक है हालाकि ये सोच अब बहुत हद तक सीमित हो चुकी है पर अभी भी हमे ऐसे उदाहरण देखने को मिलते है जिसके कारण प्रतीत होता है कि उन महान सन्तों की शिक्षा तथा महापुरूषों के वचन कही व्यर्थ ही चले जाएं ।

इन सब भेद– भाव को देखते हुए अम्बेडकर साहब के निर्देशित मार्ग पर चलना ही सबसे अधिक अर्थपूर्ण होगा, कि ऐसे ऊँचे नीच तथा भेदभाव पूर्ण माहौल से हमे सिर्फ हमारी शिक्षा ही निकाल सकती हो क्योकि शिक्षिति व्यक्ति से आशा की जा सकती है कि वो अपने समाज की रूढ़िवादी, दबी–कुचली सोच से ऊपर उठकर कुछ नया तथा अच्छा सोच सकता है इससे एक प्रगतिशील समाज की स्थापना हो सकेगी। ऐसी ही आशा हमें देश के सभी धर्मों एंव जाति के लोगो से करनी चाहिए कि वे अपनी सोच और शिक्षा में परिवर्तन के प्रयासो के लिए सदैव तत्पर रहेगें।

अध्याय–2

स्वतंत्रता के पश्चात् उत्तर भारत के धार्मिक परिवेश में दलितों की स्थिति–

भारतीय इतिहास के पन्नो में दलितों के बारे में जो जानकारी उपलब्ध है जो किसी आपराधिक प्रवृत्ति से कम नहीं मानी जा सकती है। दलितों की स्थिति का जो पक्ष हम पढ़ चुकें हैं या देख चुकें है वो किसी भी व्यक्ति के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक क्षति का कारण माना जा सकता है। ऐसा इसलिये था क्योंकि अपने देश और देशवासियों के बीच रहकर यदि आपके साथ हीनता की भावना रखी जाए, अस्पृश्यता की श्रेणी में रखा जाए तथा आपके गुणों के बजाए आपकी जाति के आधार पर आपसे व्यवहार किया जाए तो यह किसी भी मनुष्य के लिये सामाजिक रूप से अलग होने का एक महत्वपूर्ण कारण होगा।

दलित कौन? –

ये वो प्रश्न है जिसका उत्तर हम पहले भी दे चुके हैं परन्तु समय के साथ–साथ इसके अर्थ में कुछ भिन्नताएं देखी गयी जैसे पहले जहॉ, चतुर्थ श्रेणी में शूद्रों को गिना जाता था, वही मध्यकाल आते–आते उन्हे अछूत तथा अन्य नामों से जाना जाने लगा। जिसमें **महार जाति**, व जनजातियां, इत्यादि आने लगे। स्वतन्त्रता के पश्चात् और औपनिवेशिक शासन के अधीन ये कुछ हद तक सेना में भर्ती हुए जिससे कुछ लोगों को नौकरी करने, शिक्षा लेने–देने तथा आन्दोलनों का नेतृत्व करने, शिक्षित होकर अपनी बात कहने का सुअवसर प्राप्त हो सका। ये सत्य है कि हर कालवर्ष में इनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ परन्तु यह सत्य नही है कि ये उस परिस्थिति में शोषित न हुए हो।[1]

कई स्त्रोतों से तो यह भी ज्ञात हुआ हे कि शूद्र ही असल भारतीय हैं। आर्य आक्रमणों के बाद इन्होंने (आर्यों) (जो कि भारत में आक्रमणकारी के रूप में आए थे) शूद्रों को दण्डित किया, इनका धर्म परिवर्तन कराया तथा स्वयं को उच्च वर्णों में

[1] दलित दस्तक पत्रिका

स्थान दिलाकर ,उन लोगों को शूद्र ही रहने दिया।[2] आज आजादी के इतने वर्षो बाद भी समाज में इनकी स्थिति में परिवर्तन नहीं आया है। ये कल भी वाह्य आक्रमणकारियों का शिकार थे और आज भी उन्ही के वंशजो, जो स्वयं को तीन अन्य श्रेणी में स्थापित कर चुके हैं, उनसे ग्रसित है जबकि सही मायनों में वे ही (शूद्र) भारतीय है, जेा यहीं के जनमें है, और इसी मिट्टी में कार्य करते हुए, यही दफन हुए। परन्तु आज की स्थिति में यह अछूत, दलित दास के रूप मे भारतीय समाज का पिछड़ा अंग है। हालांकि अछूत शब्द का प्रयोग दलितों के लिये हमेशा से प्रयोग नहीं किया जाता था। **ऋग्वेद** में एक स्थान पर एक ऋषि कहता है" मैं ऋग्वेद कवि हूॅ, मेरे पिता वैद्य है तथा मेरी माता अन्न पीसने वाली है। साधन भिन्न हैं परन्तु सभी धन की कामना करतें हैं।"[3] इससे स्पष्ट है कि व्यवसाय अनुवांशिक नही थे तथा जाति–व्यवस्था का जो संकीर्ण रूप हमें कालान्तर में देखने को मिलता है उससे ऋग्वैदिक समाज निश्चित ही अछूता था।

इससे स्पष्ट होता है कि ऋग्वेद के समय में यह पूर्णतः कर्म आधारित था, जो पैसों से सम्बन्धित था न कि जाति से। परन्तु उत्तर वैदिक काल आते–आते वर्णो में क्रमशः कठोरता आने लगी और अब वे जाति के रूप में परिणित होने लगे।[4]

शतपथ ब्राहमण में भी शूद्रों की हीन स्थिति का उल्लेख हुआ है तथा बताया गया है कि शूद्र अभिशप्त पुरूष द्वारा संबोधन योग्य नहीं होता था। परन्तु इस समय तक समाज में अस्पृश्यता की भावना का उदय नही था।[5]

जाति आधारित भावना समाज में धीरे–धीरे फैली। पहले एक ही परिवार के अलग–अलग व्यक्ति पैसा कमाने हेतु कार्य कर रहे थे। वो एक समय पर उच्च स्थिति का प्रतीक था परन्तु कुछ समय बाद यह कार्य जाति आधारित माना जाने लगा तथा स्वंय को उच्च जाति का बताने की होड़ में लोगों ने व्यवसाय बदल दिये और जिन्होंने व्यवसाय नही बदलें वे अछूतों की श्रेणी में धीरे–धीरे आने लगे।

---

[2] प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति पृष्ठ–85

[3] ऋग्वेद 9, 12

[4] प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, श्री के. सी. श्रीवास्तव, पृष्ठ–97

[5] शतपथ ब्राह्मण,पृष्ठ– 13.6, 2.1

स्वतंत्रता के पश्चात् दलित कौन और भारतीय समाज में उनका स्थान–

प्रेमचन्द्र का उपन्यास **"ठाकुर का कुँआ" का** कथानक अस्पृश्यता पर केन्द्रित था और कहानी की मुख्य पात्र गंगी अपने बीमार पति के लिये कुएं का साफ पानी नहीं ला पायी क्योंकि उच्च जाति के लोग, दलितों को अपने कुएं से पानी नही लेने देते थे। इस उपन्यास को पढ़करे भारतीय ऊॅच–नीच की गहरी खाई दिखायी देती है जो मनुष्य की बीमारी में भी उसको जल नही दे सकती है क्योंकि वह दलित है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भले ही अंग्रेजी शासन भारत से चला गया हो पर अंग्रेजो के शासन के प्रमुख आधार जैसे शिक्षा, नौकरी ,शासन प्रणाली इत्यादि यही रह गयी और उसी का परिणाम हुआ कि कुछ बुरी प्रथाओं से देश निजात पा पाया।

यूरोप में जब पुर्नजागरण का समय आया और पूंजीवाद को प्राथमिकता दी गयी तब लगा कि भारत में भी कुछ ऐसा ही होगा परन्तु
यूरोप में पूंजीवाद के पश्चात् अपना ध्यान अपनी सामाजिक असमानताओ को दूर करने में केन्द्रित किया। भारतीय समाज के पढ़े लिखे दलित महान व्यक्तियों ने भी सामाजिक समानता की प्राप्ति के लिए प्रयास किये जिसका सीधा असर संविधान में देख सकतें हैं।

दलित समाज को सम्बोधित करते हुए अम्बेडकर जी

भारत में दलितों की कानूनी लड़ाई लड़ने का जिम्मा सबसे सशक्त रूप में डा0 अम्बेडकर ने उठाया, डा0 अम्बेडकर दलित समाज के प्रणेता बने और सबसे पहले

देश में दलितों के लिये सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों की पैरवी की।[6] यह अम्बेडकर का ही स्वपन था कि एक ऐसा समय आए जब भारत में किसी को भी जाति के आधार पर कार्य न दिया जाए बल्कि उस व्यक्ति की योग्यता, ही सर्वोपरि होनी चाहिए। हमारे समाज में जाति के दलदल से निकलने के लिये और शिक्षा को हमारे लिये उपयोगी बनाने में डॉ भीमराव अम्बेडकर, बाबा गाडसे, कबीरदास, संत रविदास, रमाबाई इत्यादि मध्यकाल और आधुनिक तीनों ही समय में अलग–अलग बदलावों के साथ देखा जाता है। इन बदलावों में जिस प्रकार मध्यकाल में संत रविदास जी का नाम आता है जिन्होंने अपने ज्ञान के प्रकाश से लोगों में नई चेतना प्रकट की, ठीक उसी प्रकार आधुनिक काल में डॉ भीमराव अम्बेडकर का नाम आता है जो स्वयं महार जाति के थे। बचपन से जो भेदभाव इन्होनें सहा उसका व्याख्यान करना कठिन है यह बात लिखने में ही कितनी कष्टकारी है कि एक छोटा बालक जो पानी पीने, शिक्षा के लिये स्कूल में बैठने, बैलगाड़ी वाले के द्वारा अस्पृश्य होने के कारण उतार दिये जाने से ग्रसित हो उसका कोमल मन इस सामाजिक द्वेष की भावना के प्रति कितना विचलित होगा।[7]

एक ब्राहमण बालक जब छोटे अम्बेडकर जी को अछूत होने के कारण कक्षा में बाहर बैठने का आदेश देता है और उसी क्षण शिक्षक जिनकी नजरों में प्रत्येक बालक सामान्य होना चाहिए था वे स्वयं अम्बेडकर जी को डांटकर कक्षा के बाहर बैठकर पढ़ने के लिये कहे तो विचार कीजिए ऐसा उस प्रत्येक व्यक्ति के साथ समाज के हर उस स्थान पर यह भेदभाव होता होगा। कार्य के आधार पर किसी को छोटा बड़ा होना कोई अपराध नहीं है परन्तु यदि उसी कार्य के आधार पर कोई आपको अछूत समझे, हीन समझे तो यह किसी अपराध से कम नही।

[6] कितना सच हुआ दलितों के लिए भीमराव अम्बेडकर का सपना, दः इण्डियन वायर।
[7] भारत रत्न डॉ. भीम राव अम्बेडकर

डॉ. अम्बेडकर के आन्दोलन–

अम्बेडकर जी कहते है कि, अपने आपको स्पृश्य और दूसरों को अस्पृश्य मानने वाले दो वर्गो के बीच के संघर्ष का प्रश्न है। जो लोग अपने आपको पवित्र और हमें अपवित्र मानतें हो उनकी मान्यता के अनुसार यह ऊॅच नीच की व्यवस्था ही **"सनातन"** है अर्थात वे सदा पवित्र माने जाते रहने चाहिए और हम सदैव अपवित्र, वे स्वयं को सदा ऊॅचा रखना चाहते है और हमको सदैव दीन–हीन बनाए रखना चाहते है।[8] अम्बेडकर जी इस अछूत की भावना को गहराई से समझ चुके थे।

यही कारण था कि वे अपनी शिक्षा–दीक्षा के लिये विदेश चले गये वहॉ उन्होंने उच्च शिक्षा ग्रहण की और भारत देश वापस आ गये। यहॉ उनको अपनी शिक्षा के अनुरूप नौकरी मिलने में भी कठिनाई उठानी पड़ी क्योंकि, कारण उनकी जाति थी। परन्तु फिर भी उन्हें एक अच्छे पद पर कार्य करने का अवसर प्राप्त हो गया। परन्तु उनके अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी कभी उन्हें वो सम्मान न दे सके जिसके वे हकदार थे। जिसका एकमात्र कारण उनकी जाति था। वे भलीं प्रकार जानते थे, कि वे भले ही कितना पढ़ लिख लें या किसी भी विदेश के स्कूल की डिग्री ले ले, परन्तु भारतीय समाज में उनकी स्थिति एकमात्र शूद्र से अधिक कुछ नही हो सकती है।[9] इसलिये अपनी जाति के कल्याण के लिये उन्होंने कार्य करने प्रारम्भ जिसमें सर्वप्रथम उन्होंने बम्बई में 1924 में **"बहिष्कृत हितकारिणी सभा"** की स्थापना की।[10] वे लोगों को सर्वप्रथम जाग्रत करना चाहते कि वे किसी भी तरीके से जाति के आधार पर अछूत नहीं है। और जाति के चलते वे किसी के गंदे काम करें, नालियां साफ करें, या कचरा उठाए इसके लिये वे बाध्य नही है और कोई भी उनसे छुआ–छूत जैसे अमानवकारी व्यवहार को नही कर सकता है। वे दलित जो हमेशा से इसी अहितकारी सोच को झेल रहे थे उन्हें यह बताना बहुत जरूरी था कि वे भी मानव है ब्राहम्ण की भांति उसके भी हाथ , पांव, ऑख, नाक कान है तो भला यह अधिकार ब्राहम्ण, क्षत्रिय या किसी भी ऊॅच जाति वालें को नही है, कि वो तुम्हारा (दलित का) अपमान कर सके। ये जातियां भगवान ने नही

[8] आज तक अम्बेड़कर विशेषांक
[9] अम्बेडकर विशेषांक
[10] भारत रत्न डॉ भीम रातव अम्बेडकर

बनायी और न ही उसने कार्यों का बंटवारा किया तो किस आधार पर स्वर्ण वर्ग हमें निम्नतर समझ रहा है। इसके पश्चात उन्होंने 19 व 20 मार्च 1927 **"चवदार तालाब"** पर सत्याग्रह– यह वही तालाब था जिसके पानी का उपयोग करने के लिये ऊॅच वर्ग ने एक समय निर्धारित किया था जिस समय पर कोई व्यक्ति स्वयं तालाब से पानी भरकर अछूतों को दूर से देता था।[11] ऐसा इसलिये किया जाता था ताकि अछूतों के छूने से कहीं तालाब गंदा न हो जाए और यदि कभी ऐसा होता था तो वो तालाब को स्वच्छ करने के लिये पूजा–पाठ करते थे। 1927 में मनुस्मृति की होली जलाई, हिन्दू धर्म में मनुस्मृति वो पुस्तक थी जिसमें मानवता को शर्मसार करने का कोई मौका नही छोडा था। हिन्दू सवर्णों को जाति के आधार पर ईश्वर तुल्य कर दिया और वही दलितों को अछूत मानकर उनकी परछाई भी सवर्णों के लिये घातक है, ऐसी मानसिकता को स्थान दिया है। एक ही मानव होकर कोई यदि इस स्तर का भेद भाव करें तो यह देश किसी गर्त में जाने के लिये तत्पर है क्योंकि ऐसी मानसिकता किसी व्यक्ति को आगे बढाने के बजाए अंधे गर्त मे लेकर जाने का प्रयास जरूर कर रही हैं। यह मानव की समझ के बाहर नही है परन्तु फिर भी वह अपनी परिस्थिति और समाज के दबाव में इस प्रकार दब चुका है कि वो यह समझ पाने के योग्य ही नही रह गया कि उसके लिये और उसके भविष्य के लिये क्या उचित है और क्या अनुचित है ।

इसी प्रकार 2 मार्च 1929 को नासिक में **"कालाराम मंदिर"** पर सत्याग्रह किया। दलित व्यक्ति जिस ईश्वर की पूजा अर्चना करने के लिये अपने जीवन का त्याग तक कर देता है उसी ईश्वर के दर्शन के लिये दलित व्यक्ति मंदिर में प्रवेश नही कर सकता, वह ब्राहमणों, पंडितों के अमान्य नियमों को मानने के लिये बाध्य है क्योंकि ब्राहमणों के अनुसार उनके पास अधिकार है कि वे ही भगवान की सेवा अर्चना कर सकते है। यह कहॉ का नियम है कि वही व्यक्ति मन्दिर में चढ़ने वाली फूल माला को बेचेगा, वही मन्दिर के बाहर झाडू लगायेगा वही उन गायेां की साफ सफाई करेगा जो पूजी जाती है, वही खेतो में मजदूरी करेगा परन्तु उसके यह सब करने के बावजूद भी गाय के दूध का सेवन नही कर सकता, फूल भगवान पर चढ़ा नही सकता, मन्दिर के बाहर तो साफ सफाई कर सकता है परन्तु मन्दिर में प्रवेश

[11] तत्रैव

नही कर सकता है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक था कि उनके अधिकारों को जगाने तथा उन्हें इस बात का एहसास दिलाने के लिये कि वह जिस ईश्वर के प्रति समर्पित है वह ईश्वर इस बात से अनभिज्ञ है कि दलित का समाज में क्या हाल है। इसके अलावा 13 नवम्बर 1930 को **"गोलमेज कॉफ्रेस"** इस कांफ्रेस के तीनों चरणों में अम्बेडकर जी ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई, ऐसा इसलिये था कि वे यह जानना चाहते थे, कि अंग्रेजो के सामने दलितों के लिये क्या वे भी भारतीय उच्च वर्ग की भॉति हमें अछूत समझते है। ऐसे में जब अम्बेडकर जी ने आरक्षण और प्रथक्क निर्वाचन की बात कही तब गांधी जी और कांग्रेस के अन्य नेताओं ने उन्हें रोकने का प्रयास किया। गॉधी जी ने कहा कि "अम्बेडकर ऐसा समझते है कि कांग्रेस उनके लिये कुछ कर नही रही, जबकि हमने 24 लाख रूपये दलितों के उद्धार के लिये दिये हैं।" अम्बेडकर जी कहते है कि "वे पैसे किस काम में उपयोग किये मुझे नही ज्ञात और न ही उस पैसे से मेरे समाज के किसी व्यक्ति का कोई भला हुआ है। आपने उन पैसो को बांटा है या उपयोग किया है यह आप व आपकी कांग्रेस जानती होगी। क्या आपने कांग्रेस में दलितों को प्रवेश दिया क्या आपने उन्हें अपनी बात रखने का अवसर दिया?" इस प्रकार स्वंय अम्बेडकर जी ने अपने प्रयासेां से दलितों के लिये एक सुरक्षित समाज की स्थापना करने की सोची। और सितम्बर 1932 में **पूना समझौता** किया जिसमें दलितों को आरक्षण देने की बात कही गई तथा प्रथक निर्वाचन की बात भी कही गई तब गॉधी जी ने जाति के आधार पर प्रथक्ककरण की बात को नही माना, तथा स्थिति के अनुसार सीटों को जो पहले 71 थी उनको पूना समझौते में दलितों के लिये 148 सीटों को बढ़ाने की बात कही। इसके बाद **"हरिजन सेवक"** नामक समाचार पत्र निकालकर हरिजनों के कार्य को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया गया। गौंधी जी ने अपनी गलती सुधारने का एक तरह से प्रयास किया और अछूतों के प्रति सद्भावना का संदेश दिया।[12] परन्तु अब अम्बेडकर मात्र सद्भावना और मंदिर प्रवेश इत्यादि चीजें नही चाहते थे अब वें अछूतो के लिये सम्मान पूर्वक जीवन चाहते थे इसलिये उन्होंने चुनाव लड़ने का मार्ग चुना और 1936 में मजदूरों का एक संगठन बनाकर "**स्वतंत्र मजदूर दल**" बनाया और इसे चुनाव मे उतारा। इससे सभी के होश उड़ गये जब 17 में से 15

[12] मेरे सपनो का भारत, पृष्ठ 15

उम्मीदवार स्वतंत्र मजदूर दल के घोषित हुए।[13] यह दलितों के लिये एक स्वर्णिम आगाज था फिर धीरे–धीरे **संविधान सभा** गठित हुई जिसके अध्यक्ष के रूप में अम्बेडकर जी को सम्मान सहित चुना गया। उन्होंने संविधान रचना में सभी के लिये समान अधिकारों की बात कही, जैसे शिक्षा, अवसर की समानता रहना इत्यादि। हर एक पक्ष और हर एक व्यक्ति के आवश्यकता तथा देशहित में सोचकर संविधान निर्मित किया जो आज भी सर्वमान्य है।

डॉ. अम्बेडकर का बौद्ध धर्म को अपनाना–

परन्तु इसके साथ–साथ भी वे हिन्दू धर्म में व्याप्त उन कुरीतियों को दूर नही कर पायें जो उच्च वर्ग के अन्दर अपनी जड़े फैला चुकी थी। उन्होंने अपने और उन सभी लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा कि "मनुष्य जब दूसरे मनुष्य को इतना अधिक पतित समझे कि उसको छूने से इन्कार करे ऐसी प्रथा हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज के अतिरिक्त और कही नहीं।" अस्पृश्यता हिन्दू धर्म पर एक कलंक है, ऐसा कुछ लोग कहते है लेकिन एक भी हिन्दू ऐसा नही मिलेगा जो कहे कि हिन्दू धर्म ही अपने में एक कलंक है। हममे से जो लोग ईसाई या मुसलमान बन गये उन्हे हिन्दू लेाग अस्पृश्य नही मानते, क्योंकि हम हिन्दू ही बने हैं इसलिये हमें हिन्दू अछूत समझतें है, इसलिये ईसाई और मुसलमान भी जिनके धर्म मे ऊंच नीच की शिक्षा नही है हमें नीच समझते है। इस दास्ता से मुक्ति पाने का एक धर्मान्तरण के सिवाए कोई और दूसरा मार्ग नही है, ऐसा अम्बेडकर जी का मानना था।[14]

इसी कारण से सन् 14 अक्टूबर 1956 को अपने हजारों अनुयायियों तथा पत्नी के साथ बौध धर्म को ग्रहण कर लिया तथा इसी वर्ष 6 दिसम्बर को इनका स्वर्गवास हो गया।

एक अत्यन्त महान व्यक्ति के द्वारा अपना हिन्दू धर्म त्याग कर बौध धर्म को अपनाना कोई बिना सोचे समझे किया जाने वाला कार्य नही है, तो ऐसा क्या देखा अम्बेडकर जी ने जो उन्हेाने बौद्व धर्म को विश्व के सबसे पुराने और उत्कृष्ट धर्म से

[13] विकीपीडिया
[14] भारत रत्न डॉ. भीम राव अम्बेडकर, पृष्ठ–3

कही अधिक बेहतर समझा, क्या अन्तर था जो एक दलित व्यक्ति अपनी पहचान और अपना धर्म छोड़कर एक दूसरे धर्म में प्रवेश कर गया।

गौतम बुद्ध का जीवन–

बौध धर्म के विषय में यदि जाने तो सीधे शब्दों में एक ही सही कथन समझ में आता है कि संसार में कोई भी व्यक्ति किसी के अधीन नही है प्रत्येक को अपना जीवन स्वंय निर्वाह करना पड़ता है न कोई छोटा है न कोई बड़ा , न कोई उच्च न कोई निम्न। यह संसार सभी को बराबर प्राकृतिक सुविधाएं और संसाधन देता है और संसार में यदि इसके आधार पर भी कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य को शारिरिक व मानसिक हानि पहुॅचाता है तो वह अपराधी है। जीवों का दूसरे जीव को भक्षण करना मानवता नही है, यह कार्य अमानवीय है।

बौद्व धर्म के महान प्रणेता गौतम बुद्व ने मोक्ष प्राप्ति के लिये ध्यान लगाया न कि वाह्य आडम्बरों और ईश्वर का डर दिखाया। उनकी शिक्षा में यह साफ साफ बताया गया है कि मोक्ष का मार्ग कर्मकाण्डों और आडम्बरो से नही प्राप्त हो सकता बल्कि मन की शान्ति ही मोक्ष प्राप्ति का एक मात्र साधन हैं।[15]

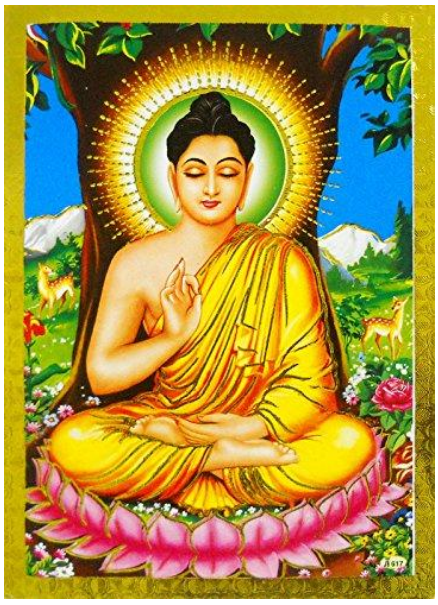

[15] गौतम बुद्ध जीवन

गौतम बुद्व का जन्म लुबिनी में 563 ई0पू0 और उनका निर्वाण 483 ई0पू0 में हुआ था।[16] यह एक श्रमण थे जिनकी शिक्षाओं का प्रचलन हुआ। यह सत्य की खोज में अपने घर परिवार को त्याग कर संसार को जन्म मरण, दुखों से मुक्ति दिलाने के मार्ग की तलाश, सत्य एवं दिव्य ज्ञान खोज में जंगल की ओर रात के अंधेरे में चल दिये।[17] बुद्व के पहले गुरू **अलार कलाम** हुए। उनसे शिक्षा लेने के बाद 35 वर्ष की आयु में वैशाखी पूर्णिमा के दिन सिद्वार्थ को पीपल के पेड़ के नीचे ज्ञान की प्राप्ति हुयी। निरंजना नदी के तट पर की गयी तपस्या सफल रही वह उस दिन से बुद्व कहलाए और वह वृक्ष **बोधिवृक्ष** कहलाया तथा गया का वह समीपवर्ती स्थान जहॉ वें तपस्या करते थे **बोधगया** के नाम से विख्यात हुआ।

उन्होने अपने धर्म का प्रचार और ज्ञान सरल भाषा **पाली** मे दिया ताकि सभी उस ज्ञान को प्राप्त कर सकें, 80 वर्ष की आयु में उनका देहान्त हो गया तथा यह घटना **महापरिनिर्वाण** कहलायी।[18]

भगवान बुद्व ने लोगो को **मध्यम मार्ग** का उपदेश दिया। उन्होंने दुख, उसके कारण और निवारण के लिये **अष्टागिंक मार्ग** सुझाया। वे जानते थे कि अत्यन्त कठिन मार्ग का अनुसरण व्यक्ति हमेशा करे, यह सम्भव नही है और अत्यन्त सरल मार्ग उसे आवश्यक नही है कि सही दिशा तक पहुचा सकें इसलिये मध्यम मार्ग व्यक्ति को भगवान से जोड़े रखने के लिये उचित समझा। उन्होंने अहिंसा पर जोर देते हुए पशु बलि और यज्ञ के दौरान दी जाने वाली बलि की निंदा की , उनके उपदेश–

महात्मा बुद्व ने सनातन धर्म की भी कुछ संकल्पनाओं का प्रचार किया।

- ध्यान तथा अर्न्तदृष्टि
- मध्यममार्ग का अनुसरण
- चार आर्य सत्य
- अष्टांगिक मार्ग[19]

---

[16] विकीपीडिया
[17] विकीपीडिया
[18] त्रिपिटक
[19] विकीपीडिया

बुद्ध जी को मानने वालों मे कई महापुरूष भी हुए जिनमें **अशोक** का नाम सर्वोपरि है। अशोक ने न केवल भारत बल्कि श्रीलंका, नेपाल, म्यांमार तक में भी बौध धर्म का प्रचार– प्रसार किया। इस समय बौद्व संगीतियां भी कराई जाती थी जिसमें अभी तक चार बौद्व संगीतियां सम्पन्न हुई थी। इनके माध्यम से विनय पिटक, सुत्त पिटक और अभिधम्म पिटक की रचना हुयी।[20] जिसमें संध और उसके भिक्षुओं के लिये नियम दिये गये है। बौद्व धर्म के सभी मनुष्य सिद्वान्तो के विषय मे जानकारी दी गयी है तथा अभिधम्म पिटक के अर्न्तगत धर्म और उसके क्रियाकलापें की व्याख्या की गई है।

इसके साथ ही हमे **धम्मपद** की जानकारी प्राप्त होती है। जिस प्रकार हिन्दू धर्म में गीता का सर्वोच्च स्थान है उसी प्रकार बौद्व धर्म में धम्मपद आदरणीय माना गया है यह **सुत्त पिटक के खुइक निकाय का एक अंश है।**

धम्मपद मे 26 वग्ग और 423 श्लोक है । यह भी कहा जाता है कि यदि बौद्व धर्म के विषय में पूर्ण ज्ञान की आवश्यकता हो तो सिर्फ धम्मपद का पाठ करना चाहिए।[21]

बुद्व अपनी शिक्षा के माध्यम से संसार को दुखो से दूर करना चाहते थे वे सांसारिक मोह माया का बन्धन छोड़कर ध्यान लगाने की बात कहते थे। वे शरीर को नश्वर मानते तथा कहते कि **"मनुष्य को उतना ही खाना चाहिए जितना वह जी सकें उसे उतनाही धन कमाना चाहिए जिससे उसका मूल भूत आवश्यकताएं पूरी हो सके।"** वे यह भी कहते कि यदि आप मेरी बात से संतुष्ट नही है तो आप मेरी शिक्षा मे तर्क–विर्तक कर सकते है आप स्वंय भी मेरे ज्ञान का मूल्यांकन कर सकते हैं।[22] उनका उददेश्य मानव जाति को सही मार्ग दिखाना था जिससे वे किसी भी अंध भक्ति में न फंसे और अपनी भक्ति भाव को सही जगह पर मोक्ष प्राप्ति में लगाये। उन्होने स्वंयं भी मोह माया का त्याग किया था इसलिये वह जान गए थे कि संसार नश्वर है और ये वाहय संसार किसी का नही है। अतः उन्होंने अपने उददेश्य को सफल किया। जिस प्रकार प्राचीन समय में बौध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्व ने शिक्षा देकर मानव जाति का कल्याण किया ठीक उसी प्रकार मध्यकाल

[20] प्राचीन भारत का इतिहास एवं सस्कृति
[21] विकीपीडिया
[22] साक्षात्कार

आते–आते संत रविदास जैसे महान पुरूष हुए जो बुद्व की ही भांति अपनी शिक्षा और ज्ञान से मानव कल्याण करना चाहते थे। अतैव उन्होंने भी अछूत, अस्पृश्यता तथा वाहय आडम्बरों के फेर से अलग होकर मानव को सच्चे मन से ईश्वर में लीन होने का संदेश दिया।

अध्याय–3

रैदासिया धर्म की पृष्ठभूमि

भारत की 1,2108,08,54,977 जनसंख्या में लगभग भारतीय दलित जाति का है जो पूरे देश में व्याप्त है।[1] वाराणसी स्थित संत रविदास जी का मंदिर गुरू सरवणदास संगत रविदास जी का मंदिर गुरू सरवणदास के कर कमलों द्वारा निर्मित होना तय हुआ। यह बात तो सर्वत्र ज्ञात है कि जब-जब पृथ्वी पर बुराई फैलती है तब–तब उसे खत्म करने और मानव जाति का उद्धार करने के लिए महापुरूष जन्म लेते हे। ऐसे ही महापुरूष संत रविदास हुए और उनको मानने वाले अनुयायी **रैदासिया** कहलाए। उनकी वाणी में जनकल्याण और अस्पृश्यता का अंत करने वाली शक्ति थी। यही कारण था कि समय के साथ उनके अनुयायियों ने एक अलग धर्म की बात कही जो अन्य को श्रेणी उच्च जाति से अलग करता हो, जिसमें वही लोग रहे जो रविदास को मानने वाले हो, वे सभी मानव जो श्रद्धाभाव से स्वयं को गुरूजी को अर्पित करते है वे लोग रैदासिया धर्म से जुड़ चुके है और देश–विदेश में फैली इसकी ख्याति से लोग दिन–प्रतिदिन जुड़ रहे है।

रैदासिया धर्म का इतिहास वही से शुरू हो जाता है। जब से यह सिक्खों के अत्याचारों से दूर होने के लिए संत रविदास की शरण में आए और मानव जाति के आधारभूत अधिकारों को जानने लगे, विश्व का विश्व का प्रत्येक जीव किसी अन्य के अत्याचारों को सहने के लिए नही बना और न ही किसी को यह अधिकार है कि वो दूसरे व्यक्ति का शोषण करे।

ऐसे में चमार जाति (जिसने सर्वप्रथम पहल की) का ऐसा मानना था कि चमारों के लिए सबसे अच्छा तरीका अपनी स्वयं की पहचान का दावा करना है इस अधिक स्वतंत्र शिविर के लिए सिक्ख धर्म को विज्ञापन धर्म (मूल लोगों) के आन्दोलन के रूप में चमार समुदाय (एक अलग धर्म और राष्ट्र) के रूप में देखा जाता है। रविदासियों के अनुसार चमारों की प्रगति का एकमात्र तरीका गुण रविदास की छवि पर विशेष रूप से केन्द्रित एक स्वतन्त्र धार्मिक मार्ग को आगे

[1] विकीपीडिया

बढाना है। और इसी को ध्यान में रखते हुए रैदसिया नामक नए धर्म की स्थापना की गयी।[2]

लोगो को उपदेश देते रविदास जी

हालांकि इसके पीछे भी कई बाते सामने आती है। जैसे कि जो पंजाब में सिक्ख हुए उनको समानता नही मिली वे आज भी अजबी सिक्ख (बाल्मीकि से बने) और रामदासिया पुकारते है। और सहजदारी सिक्ख (जो बाल, दाड़ी और कटार कर भी नहीं रखते) और वे सिक्ख जो इन पाँच ककारों को मानने वाले थे वे ही सच्चे सिक्ख कहलाए। जबकि दलितों में ये दोनो आते है परन्तु परिवर्तन के बाद भी इनकों समानता नहीं मिली ये मजहबी सिक्ख और रविदासिया कहलाए।

ऐसा भी मत है कि इन लोगों ने अपना धर्म को नहीं बदला ये उत्तर प्रदेश में रहते हुए हिन्दुै कहलाए और जो पंजाब में आदिधर्मी रहे अर्थात रविदास को मानने वाले। इस समय डॉ0 भीम राव अम्बेडकर ने भी लोागों में जागरूकता लाने तथा बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार को नई दिशा दी, रविदासिया शिक्षा भी बौद्ध धर्म की शिक्षा से मिलती जुलती है। उसमें भी अंध विश्वास और अंध भक्ति से दूर रहने का और मोक्ष की प्राप्ति हेतु ध्यान लगाना समाज कल्याण करने की बात कही गयी थी, यह बौद्ध धर्म से प्रेरित हुआ परन्तु बौद्ध धर्म में विलीन नहीं हुआ यही कारण था कि समय बीतने के साथ–साथ रैदासिया धर्म को लाने के लिए लोग एक जूट हुए और

[2] फैथ्रिन लुम (2001) सिक्ख इन युरोप, माइग्रेशन, आइडेंटिटीज एंड रिप्रेजेन्टेशन (एडिअर्स नॉट ए जैकबसेन एवं फ्रिस्टीना मायॉल्ड) एशग्रेट, पृष्ठ 186

सत्कार द्वारा और अथक प्रयासों के बाद रविदासिया धर्म को सरकार द्वारा मान्यता प्रदान की गयी।[3]

रविदासिया धर्म के नियम

इसमे उन्होने अपने रहबर का नाम सतगुरू रविदास महाराज जी बताया

धर्म – रविदासिया

धार्मिक पुस्तक – 'अमृतवाणी' 'सतगुरू रविदास महाराज जी'

हमारा कौमी निशान – हरि

साहिब – हरि

हमारा सम्बोधन – जय गुरूदेव

हमारा महान – श्री गुरू रविदास

तीर्थ महान – अस्थान मंदिर सीर गोवर्धनपुर वाराणसी (उ.प्र.)

हमारा उद्देश्य – सतगुण रविदास जी की मानवतावादी विचारधारा का प्रचार, इसके साथ–साथ महाऋषि भगवान बाल्मीकि जी, सतगुरू नामदेव जी सतगुरू कबीर जी, सतगुरू त्रिलोचन जी, सतगुरू जैन जी तथा सतगुरू सधना जी की मानवतावादी विचारधारा का प्रचार करना तथा सभी धर्मो का सम्मान करना मानवता के साथ प्रेम करना तथा सदाचारी जीवन व्यतीत करना।[4]

---

[3] साक्षात्कार द्वारा

[4] 'अमृतवाणी' सतगुरू रविदास महाराज जी (सटीक) पृष्ठ–6

सिक्खो को अलग होकर रविदासिया एक धर्म के रूप में गठित करना दलित समाज और चमार जाति के लिए अतयंत गर्व की बात है।

डेरा सच्च खण्ड तथा ट्रस्ट के कार्य–

15वीं ओर 16वीं शताब्दी में गुरू रविदास जी अपनी वाणी के कारण लोगों में बहुत प्रसिद्धि था चुके थे। उनको मानने वालो की संख्या दिन–दुगनी बढ़ती जा रही थी।[5] उनके अनुयायियों में हिन्दु मुस्लिम सिक्ख सभी धर्मो के व्यक्ति थे। ये वे लोग थे जो दलित थे, अपने धर्म जाति में सम्मान से हीन समझे जाने वाले लोगों ने संत रविदास की शरण ली जो स्वयं चमार जाति के संत थे परन्तु अपने ज्ञान की गंगा से उन्होने समाज के अछूत वर्ग को कभी भी निसहाय नही होने दिया। उन्होने जाति भेद का खंडन किया तथा सभी को एक ईश्वर की संतान कहा यही कारण था कि समय के साथ–साथ लोगों ने रविदास जी की शरण ले ली। गुरू रविदास के मानने वालो में सिक्खों का प्रतिशत अधिक था अर्थात वे सिक्ख जो अपनी जाति में दलित थे उन्होने अपने धर्म का त्याग कर रविदास की शरण ले ली थी। सिक्ख धर्म से अलग हुए लोगो में भले ही रैदासिया धर्म को अपना लिया हो परन्तु ऐसा कदापि नही है कि वे सिक्ख ककारो और सिक्ख परम्पराओ से जुडे नियमो को त्याग हो रविदास एक कवि, संत समाज सुधारक और अध्यात्मिक व्यक्ति थे सिक्ख ग्रंथ गुरू ग्रंथ साहिब मे रविदास जी के भक्ति गीतो को शामिल किया गया है हिन्दु धर्म मे भी दादू पंथी परम्परा के पंच वाणी पाठ मे भी रविदास जी को कविताएं है।[6]

डेरा सच्च खंड

[5] अरविंद शर्मा (2003) द स्टडी ऑफ हिन्दू इज्म, द यूनिवासिटी ऑफ साउथ कैरोलिना प्रेस, पृष्ठ 229
[6] रविदास जी (भारतीय रहस्यवादी कवि) 2009

हम रविदासियों की परम्पराएं सिक्खो से अलग नही है रविदासियो कि अलग–अलग परम्पराए है हालाकि हम सिक्खो के 10 गुरूओं और गुरू ग्रंथ साहिब को अन्तयंत सम्मान प्रदान करते है।[7]

वाराणसी मे होता सतसंग

संत रविदास के उपदेशो को जन–जन तक पहुंचाना–

परन्तु हमारे लिए हमारे गुरू रविदास जी सर्वोच्य हो गुरू ग्रंथ साहब हमारे लिए पूजनीय है क्योंकि इसमे हमारे गुरू रविदास जी के उपदेश है तथा अन्य धार्मिक विभूतियों के भी उपदेश है जिन्होंने जाति व्यवस्था के खिलाफ बाते उठाई है। हम उन गुरूओं और संतो को भी प्रणाम करते है जिन्होंने इस मुहिम मे रविदास जी का साथ दिया। समाज सुधारक के रूप मे संत रविदास जी हमारे स्मरणीय रहेगे उनेक कार्यो द्वारा आज हम सर उठाकर अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत है। सिक्ख धर्म मे व्याप्त ऊँच नीच के फेर से मुक्त होने के लिए ही दलितो ने रैदासिया पन्थ के शरण ली। 21वीं सदी मे गठित किये गये सिक्ख धर्म से रविदासिया धर्म ने स्वयं को अलग कर लियां। सन् 2009 आस्ट्रिया की राजधानी

[7] ओंटारियो मे श्री रविदास मन्दिर द्वारा पोस्ट

वियना मे अमर शहीद रामानन्द दास जी की हत्या के पश्चात् आन्दोलन ने स्वयं को पूरी तरह से सिक्ख धर्म से अलग करके एक नए धम। के रूप घोषित कर दिया।[8] चमार जाति जो पंजाब की थी वे इनसे सबसे अधिक प्रेरित थी क्योकि गुरू रविदास जी भी जाति से चमार थे अतः इनके अनुयोयियों मे चमारो की सख्या बढ़ी तथा कार्य के आधार पर स्वयं को कम समझने के लोगो की मानसिकता में परिवर्तन आया। उनके विश्वास और भविष्य में एक नया अध्याय शुरू करने के लिए यह आवश्यक था कि रैदास के अनुयायी अपना एक अलग पंथ (धर्म) का निर्माण करे। परन्तु सिक्खों से अलग होने के बाद भी सिक्ख सम्प्रदाय, की सत्संग लगंर इत्यादि सेवाओ को मानवता बढ़ाने के लिए अपनाया गया।

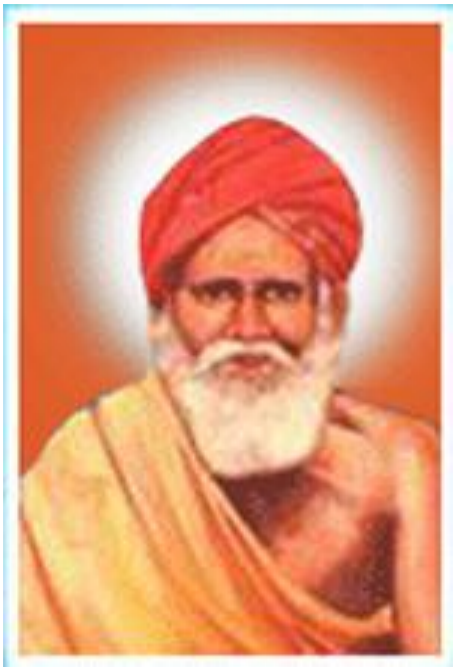

श्री 108 संत बाबा पिप्पल दास जी महाराज

सतं रविदास जी के उपदेशो और ज्ञान को जन–जन तक पहुचाने और उनके देखे गए स्वप्न को साकार करने के लिए यह आवश्यक था कि उनके अनुयायियों में से ऐसे लोग सामने आए जो मानव जाति के कल्याण का कार्य कर सके इसमे सर्वप्रथम जिनका नाम सम्मान के साथ लिया जाता है ने बाबा पिप्पल दास जी महाराज थे, पिप्पलदास जी का जन्म भटिण्डा मे हुआ था ये बचपन से ही परमार्थी स्वभाव के थे और इसी के चलते वे जंलधर आकर बस गए जहा पहला देरा स्थित

[8] पंजाब सम्प्रदाय नया धर्म की घोषणा करता है, द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 1 फरवरी 2010

है यही बाबा ने संगत् को सेवा सिमरन और सत्संग से जोड़ा। इनके द्वारा कई जिज्ञासुओं ने आध्यात्मिक शिक्षा को ग्रहण किया और अपना शरीर सन् 1985 में त्याग दिया और ज्योति –ज्योति समा गए। प्रत्येक वर्ष पहला नवरात्र गुरू रविदास जी की याद में मनाया जाता है और निशान साहिब चढ़ाए जाते है।

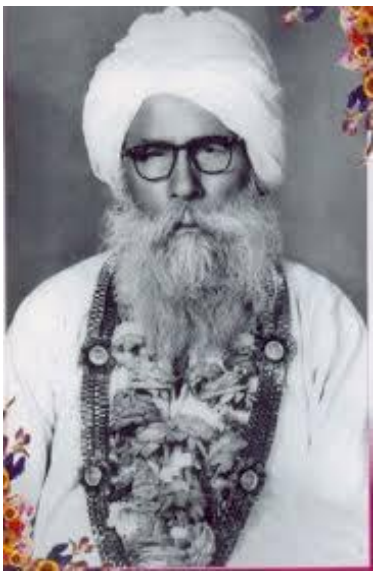

श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज

इनके पुत्र श्री 108 संत सरवण दास जी महाराज हुए अपने पिता जी की मृत्यु के बाद डेरे का कार्यक्रम सरवण दास जी ने संभाला यह संगत से बहुत प्यार करते थे इन्होने अपने ज्ञान के आधार पर आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों द्वारा स्थूल शरीर के इलाज का प्रबन्ध किया ये डेरे मे बच्चों को भी पढ़ाते थे।[9] ये बचपन से ही एकांत वास मे साधना के लिए निकल जाया करते थे, जहाँ ये ध्यान लगाते थे वहाँ उनकी याद मे मंदिर डेरा सच्चखण्ड बल्ला मे सुशोभित जी को संगत की सेवा मे जोडा कुछ समय बाद संत रविदास जी और संत निरंजन दास जी ने भी अपना जीवन गुरू के चरणों में अर्पित कर दिया और संत सरवण दास जी द्वारा लगाई गई सेवा कार्यो को कुशल ढंग से निभाने लगे।

[9] अमृतवाणी सतगुरू रविदास महाराज जी

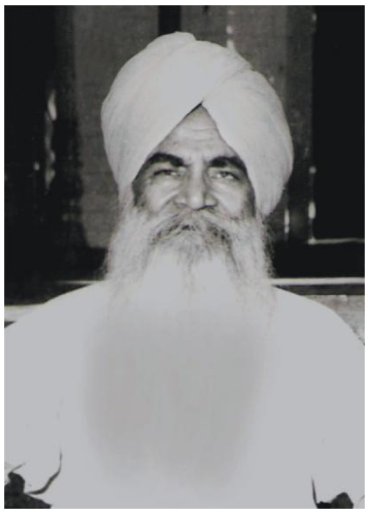

श्री 108 संत हरी दास जी महाराज

इसके बाद डेरे के तीसरे गुरू के रूप में श्री 108 संत हरी दास जी महाराज हुए जिन्होंनें डेरे का संचालन संभाला, इनके सहायक के रूप में श्री 108 संत गरीब दास जो और 108 संत निरंजन दास जी की सेवा लगाई गई।

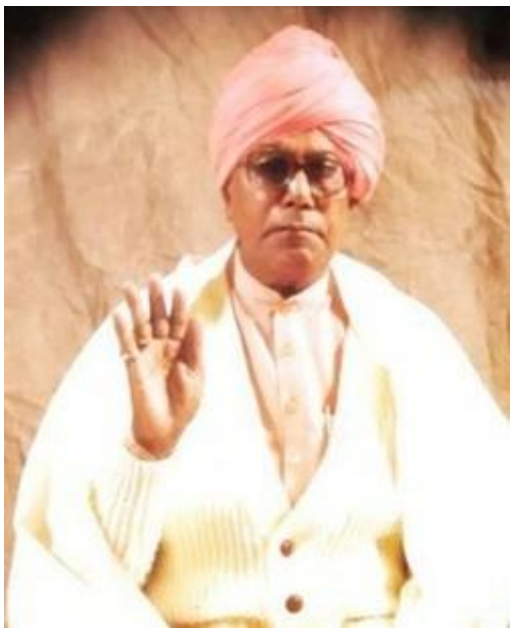

श्री 108 गरीब दास जी महाराज

चौथे गुरू के रूप में गरीब दास जी ने अस्पताल खुलवाए 1982 में जालंधर में खोला गया। संत सरवण दास जी के नाम पर अस्पताल का नाम **'संत सरवण दास चैरिटेबल अस्पताल'** रखा। इसका प्रबंध अब तक तो 'संत सरवण दास चैरिटेबल

ट्रस्ट' चला रहा है, जिसके संचालक सदैव ही डेरा सच्च खण्ड बल्ला के संचालक होगें। इसमें अनुभवी डाक्टरों की भर्ती की गयी ताकि सुविधाएं बाधित हुए बिना दी जा सके।[10]

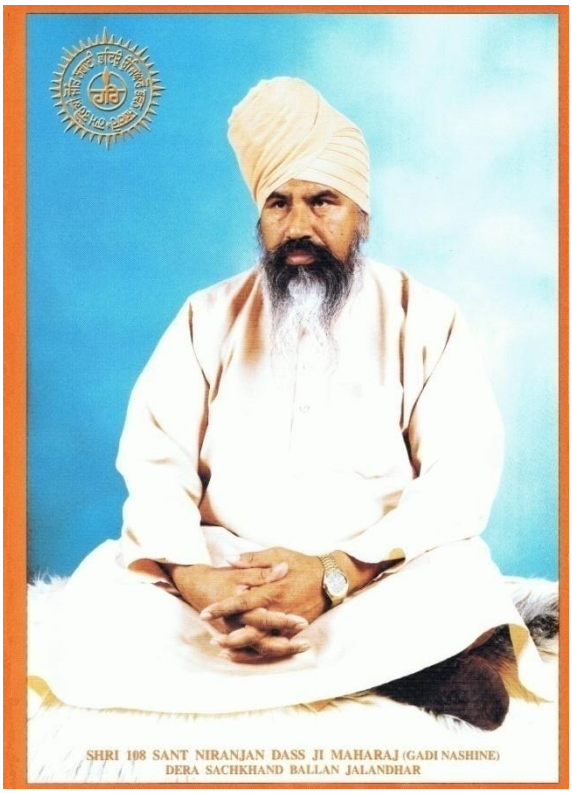

श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज

इसके बाद संत श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज (वर्तमान गद्दी नशीन) गद्दी पर विराजमान हुए इनका जन्म 6 जनवरी सम्वत् 1942 के दिन जालन्धर में हुआ। बचपन से ही बाबा जी समय मिलते ही गुरू जी की सत्संग में चले जाया करते थे, वे संतो के वचन सुनते, उनकी सेवा सत्कार किया करते थे। इनको संत सरवण दास जी प्यार से **हवाईगर** कहकर पुकारा करते थे। सरवण दास जी इनके भक्ति भाव और डेरे के प्रति इनकी सच्ची निष्ठा को देखकर बहुत प्रसन्न होते थे। जब निरंजन दास जी गद्दी नशीन हुए तो वे लंगर एवं डेरे की सभी व्यवस्था को स्वयं ही देखते थे यहाँ तक की वे नगरों में जाकर दूध भी स्वयं ही लाया करते थे। इन्होंने अस्पताल बाबा जी के जन्मस्थान पर खोला, संगत की सुविधा, बेगमपुरा शहर पत्रिका इत्यादि कल्याणकारी कार्य किए। 23 जुलाई 1994 को बाबाजी

[10] अमृतवाणी, The Ultimate Place of Pilgrimage

ब्रहमलीन हो गए इनके रहते हुए इन्होंने कई महान कार्य किए, इन्होंने रविदास जन्म स्थान मन्दिर में, 31 स्वर्ण कलश सुशोभित कराए, संगत की सुविधा हेतु चार मंजिला इमारत का निर्माण करवाया तथा वहाँ और अधिक जमीन खरीदी। आपके ही प्रतिनिधित्व में, यूरोप की संगत द्वारा स्वर्ण पालकी भेंट की गई और गुरू रविदास जन्म स्थान मन्दिर को स्वर्ण मंडित करने का कार्य आरम्भ किया गया।

ब्रह्मलीन अमर शहीद श्री 108 संत रामानन्द जी

श्री 108 संत रामानन्द महाराज जी का जन्म 2 फरवरी 1952 को, पिता श्रीमान् महिंगा राम जी के गृह में, माता श्रीमती जीत कौर जी की पावन कोख से हुआ। आप बचपन से ही साधु स्वभाव रखते थे। आप जी का मनमोहक रूप, गली–मोहल्ले के लोगों को मंत्रमुग्ध कर देता था। बी.ए. तक की शिक्षा आप जी ने दोआबा कॉलेज से प्राप्त की।

संत रामानन्द जी एक परिश्रमी, दृढनिश्चयी योद्धा थे, जो मिशनरी के कार्यों को संपूर्ण करने के लिए, दिन रात एक करते हुए न तो थकावट महसूस करते थे और न ही उकताहट। आप अकसर कहा करते थे 'जो समय महाराज जी की सेवा में लग जाए वही अच्छा है, क्या पता फिर समय न मिले।'

जगत्गुरू गुरू रविदास महाराज जी के मिशन का प्रचार व प्रसार करने के लिए गए श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज वर्तमान् गद्दीनशीन डेरा सच्चखण्ड बल्लां और गुरू घर के वज़ीर कीर्तन के धनी, महान् विद्वान, नाम के रसिया, महान वैद्य श्री गुरू रविदास मिशन के केन्द्रबिन्दु, संत समाज के अमूल्य

रत्न, श्री 108 संत रामानन्द जी, अंत समय भी श्री गुरू रविदास महाराज जी का नाम उच्चारण करते रहे, जैसे कह रहे हों कि वे अभी मिशन के प्रचार व प्रसार के लिए बहुत कुछ करना चाहते है। परन्तु भविष्य को यह मंजूर नहीं हुआ और आप दिनांक 25 मई प्रातः काल रविदासिया कौम के लिए शहादत का जाम पीते हुये ब्रह्मलीन हो गए।

वियाना में घटित दुर्भाग्यपूर्ण घटना में, संत रामानन्द जी हम से शारीरिक रूप से बिछुड़ अवश्य गए हैं, परन्तु उनकी सोच सदैव हमारा मार्गदर्शन करती रहेगी।

अतः डेरे में नियुक्त सभी प्रमुखों ने अपनी अपनी सेवाएं देकर रविदास जी के स्वप्न को साकार किया है और लगातार करते रहेंगे।

रविदास जी का स्वप्न पूरा करने में डेरे प्रमुख का अतुलनीय योगदान इस बात पर भी रहा कि वे (गुरू रविदास) जिस बेगमपुरा शहर की विचारधारा रखते थे हमारे संतों ने उनके विचार को मूर्त रूप देने का प्रयास किया है। रविदास जी हमेशा अपनी वाणी में एक ऐसे शहर की बात करते थे जो ''दुखो से दूर हो'' जिसमें निवास करने वाला व्यक्ति दुख दर्द से निरोगी हो और अपना जीवन प्रभु भक्ति में लगाए जहाँ निरोग हो और कोई आलस्य न हो वे कहते थे

''''**रविदास जु है बेगमपुरा उह पूरन सुख धाम।**

दुख अंदोह अरू द्वेष भाव नाहि बसहिं तिहिं ठाम।।

अर्थात् "सतगुरू रविदास जी फरमाते हैं कि जब जीव प्रभु का सिमरन करके प्रभु से जहा मिल जाता है वह बेगमपुरा है जहाँ पहुँचने से हर जीव गम से मुक्त हो जाता है। जहाँ प्रभु के परमानंद रूपी, सुख की प्राप्ति होती है और जहाँ कोई दुख, शोक एवं द्वेष भाव नहीं होता।"

दूसरा अर्थः– "सतगुरू रविदास जी महाराज ने समस्त विश्व में बेगमपुरा वतन को स्थापित करने का पावन संकल्प दिया हो जिसमें रहने वाला हर जीव भेदभाव रूपी गम से मुक्त हो और सब जीवों के लिए पूर्ण सुख का स्थान प्राप्त करता हो। जहाँ किसी को भेद भाव का दुख, शोक और दूसरे दर्जे का नागरिक न समझा जाता हो। ऐसे शहर की कल्पना गुरू रविदास जी करते थे।

साथ ही डेरे की तरफ से सतगुरू **स्वामी गरीबदास जी** ने समाज को एक महान देन प्रदान की और साप्ताहिक **'बेगमपुरा शहर पत्रिका'** जिसके द्वारा समाज

की सेवा और सत्कार हो रहा है, का सम्पादन किया। उन्होंने पत्रिका के महत्व को समझा और समाज में चेतना फैलाने के लिए पत्रिका की भूमिका को उपयोगी माना। गुरू जी के प्रयासों के कारण ही 1991 से यह अखबार छप रहा है जो अभी तक कार्यरत है इसका सम्पादन श्री 108 संत रामानंद जी, जो अखबार के मुख्य सम्पादक थे के नेतृत्व में और समस्त बेगमपुरा स्टाफ की मेहनत से पूरा हो पाया। इसकी ख्याति को देखते हुए श्री रामानंद जी ने भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा 10 दिसम्बर 2004 को तालकटोरा स्टेडियम, नई दिल्ली में **''नेशनल अवार्ड''** से सम्मानित किया गया। हमारे लिए यह बहुत गर्व की बात है कि यह पत्रिका तीन भाषाओं **पंजाबी, हिन्दी और अंग्रेजी** में छपने लगी है। वर्तमान में इसके सम्पादक श्री 108 संत निरंजन दास जी है। जो पत्रिका के जिस प्रकार सम्पादन का कार्य सुचारू रूप से कर रहे है।

बेगमपुरा शहर पत्रिका

बेगमपुरा शहर के साथ **बेगमपुरा शहर पत्रिका** का सम्पादन होता है, ठीक उसी प्रकार यात्रियों और सेवाकारों की सुविधाओं और संत रविदास जी के दर्शन के लिए को अधिक से अधिक लोग उपस्थित हो सके। इसके लिए लोगों ने अथक प्रयास किया और बेगमपुरा एक्सप्रेस नामक ट्रेन को चालू कराया। यह ट्रेन 7 फरवरी 2010 को नार्थन रेलवे से ओपरेट होती है। यह सुपरफास्ट एक्सप्रेस

वाराणसी जंक्शन से शुरू होकर जम्मूतवी तक जाती है।[11] इसमें पैट्रीकार की सुविधा भी दी गयी है। इस ट्रेन को "रैदासिया धर्म के अनुयायियों द्वारा भारत सरकार के रेलवे विभाग से कई प्रयासों के बाद पूरा किया गया। यह ट्रेन जूलूस, झांकियों, रविदास पूण्यतिथि इत्यादि के मौकों पर पूरी सजावट और ढोल नगाड़ों की गूंज में चलती है। इसमें न सिर्फ देशी बल्कि विदेशी यात्री भी सफर करते है, वे प्लेन की सुविधा लेने के बजाय अपने संगी साथियों के साथ रेल की सुविधा लेने के लिए और रैदासिया धर्म को उनके गीतों और खुशी को महसूस करने के लिए ट्रेन का सफर करते है। यह अपने आप में ही रविदास भक्ति के प्रति लोगों का आकर्षण और प्रेम दिखाता है।

बेगमपुरा एक्सप्रेस

रविदास जी के शोभा यात्रा को और भव्य बनाने के लिए यूरोप निवासी संगत की ओर से 23 फरवरी 2018 को श्री गुरू रविदास जन्म स्थान मंदिर बनारस के लिए स्वर्ण पालकी भेंट की गई, जो 16 फरवरी को जालधर से बनारस एक शोभा यात्रा के रूप में पहुंची।

[11] दलित दस्तक पत्रिका

संत रामानन्द जी का संकल्प था कि श्री गुरू रविदास जन्म स्थान मन्दिर को भी अन्य धर्म स्थानों की भांति सोने से मढाया जाए तब U.S.A. की संगत के सहयोग से यह कार्य सम्पन्न हुआ यह कार्य गुरू जी के आगमन पर्व के मौके पर 9 फरवरी 2009 को आरम्भ किया गया। इसके बाद 2009 के कैनेडा और यूरोप की फेरी के दौरान कार्य प्रगति के लिए योगदान दिया गया। देश भर की संगतों में उत्साह देखने को मिला, जगतगुरू रविदास जी के 633वें आगमन पर्व पर जन्म स्थान वाराणसी का गुम्बद स्वर्ण से मढ़ाया गया। साथ ही रविदासिया धर्म को धर्म के रूप में ऐलान संतो, समाज के लाखों की संख्या में, संगत की हाजरी में किया गया। रविदास जी के 635 वें जयंती पर्व एवं रविदासिया धर्म के तीसरे स्थापना दिवस पर संत निरंजन महाराज जी और संत समाज ने दो आगे वाले गुम्बदों का शुभ उद्घाटन किया। इसके बाद 636वें जयंती पर्व पर रविदासिया धर्म के चौथे स्थापना दिवस पर श्री 108 संत निरंजन महाराज जी और संत समाज ने स्वर्ण मंदिर गुम्बदों का उद्घाटन किया। स्वर्ण पालकी देखने में इतनी आकर्षक लगती है मानो सर्वस्त्र संसार में इससे आधिक सुन्दर वस्तु कोई न हो। यह पालकी जयंती के समय ही निकाली जाती है और दर्शन होने के पश्चात् यह वापस मंदिर में स्थापित की जाती है।

यह सभी सुविधाए रैदासी भक्तो के लिए उनके जीवन को निरोगी करने के लिए तथा सुख सुविधाओ को प्रदान करने के लिए दिया गया था देश विदेश में बसने वाले भक्तो और ट्रस्ट के व्यक्तियो से मंदिर और ट्रस्ट के सहयोग से चलने वाले मंदिर के अनेको कार्यो जैसे लंगर, निवास, बिल्ड़िग इत्यादि तथा अस्पताल, शिक्षा के लिए विद्यालय तथा महिलाओं की सुविधा के लिए किया गया हो। डेरे की तरफ से मिलने वाली सुविधाएं लंगर के लिए भोजन की व्यवस्था शिक्षा तथा अस्पतालो के लिए बेड, नर्स डॉक्टर, विद्यालय के लिए टीचर, पुस्तके इत्यादि दिए जाते है जिससे लोग ज्यादा से ज्यादा उससे जुड़ने लगे।

इसके साथ ही ट्रस्ट की ओर से अमृत वाणी श्री गुरू रविदास जी प्रोग्राम चलाया जाता है। और यह सभी कार्य सतगुरू रविदास जी की कृपा से सम्भव होता है। यह हमारे लिए बहुत गर्व की बात है कि बाबा जी की सेवा और सत्कार के

लिए लोग प्रतिदिन अपनी आजीविका का कुछ हिस्सा भी सर्म्पित करते है। संत रविदास जी के ज्ञान और उनकी विचार धारा का प्रयास करने के लिए देश – विदश के लाखो लोग जुडे हुए हैं। यही कारण है कि आज प्रत्येक राज्य में चाहे वो भारत का हो या विदेश के किसी क्षेत्र का वहॉ रविदास जी को चाहने और मानने वालो की भीड़ है। यह सम्मानित कार्य लोग अपने मन से करते है उन्हे इसके लिए किसी के आदेश या मनोहारी की आवश्यकता नहीं होती है। मैने स्वयं इससे पहले रविदास मंन्दिर के बारे में सुना भर था परन्तु अब इससे जुडने के पश्चात मन्दिर और मन्दिर द्वारा होने वाले कल्याणकाारी कार्यो के विषय में गहनता से जान पाए है।

ड़ेरे द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनो ही रूपों में न सिर्फ वाराण्सी स्थित मन्दिर बल्कि जालन्धर कुरूकक्षेत्र, बिहार इत्यादि स्थानो पर बने मन्दिरो का भी ध्यान रखते है। रविदास जी के स्वप्न को धीरे–धीरे साकार करना ही सेवामारो, खण्ड के लोगो और डेरे का कार्य है। अलग–अलग वजह से आने वाने लोग यहा दर्शन करके पावन हो जाते हैं क्योकि यहाँ वह किसी आडम्बर के तले छल कर नहीं बल्कि अपने आराध्य संत की अपनी स्वेच्छा से पूजा अर्चना करते है। बिना किसी भेद–भाव के वे यहाँ सभी के साथ मिल जुलकर रह सकते है भोजन कर सकते है तथा सबसे आवश्यक बात कोइ भी उन्हे भगवान के नाम पर यहाँ डराता नहीं है।

यह सभी कारण है जो रविदास जी की भक्तों और उनके अनुयायियों को अन्य कर्मकाण्डों से भरे धर्मो से अलग रखते है। इसके लिए हम रविदास जी और उनके डेरे के प्रति सम्मान प्रकट करते है।

<u>रैदासिया धर्म की सर्वप्रमाणित पुस्तक "अमृतवाणी" के विषय मे जानकारी</u>–

रैदासिया धर्म के मान्यता प्राप्त होने के बाद, यह भी आवश्यक था कि एक ऐसी पुस्तक का निर्माण किया जाये जो रैदास जी के अनुयायियों को एकता के सूत्र मे बाधने का कार्य सके।

इसी धारणा के साथ ट्रस्ट के द्वारा प्रकाशित पुस्तक अमृतवाणी सतगुरू रविदास महाराज जी (सटीक) को श्री गुरू रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (पंजीकृत) पर वाराणसी (यू.पी.) डेरा श्री 108 संत सरवण दास जी सच्चखण्ड बल्लां, जालन्धर (पंजाब) से सम्पादित होती है।

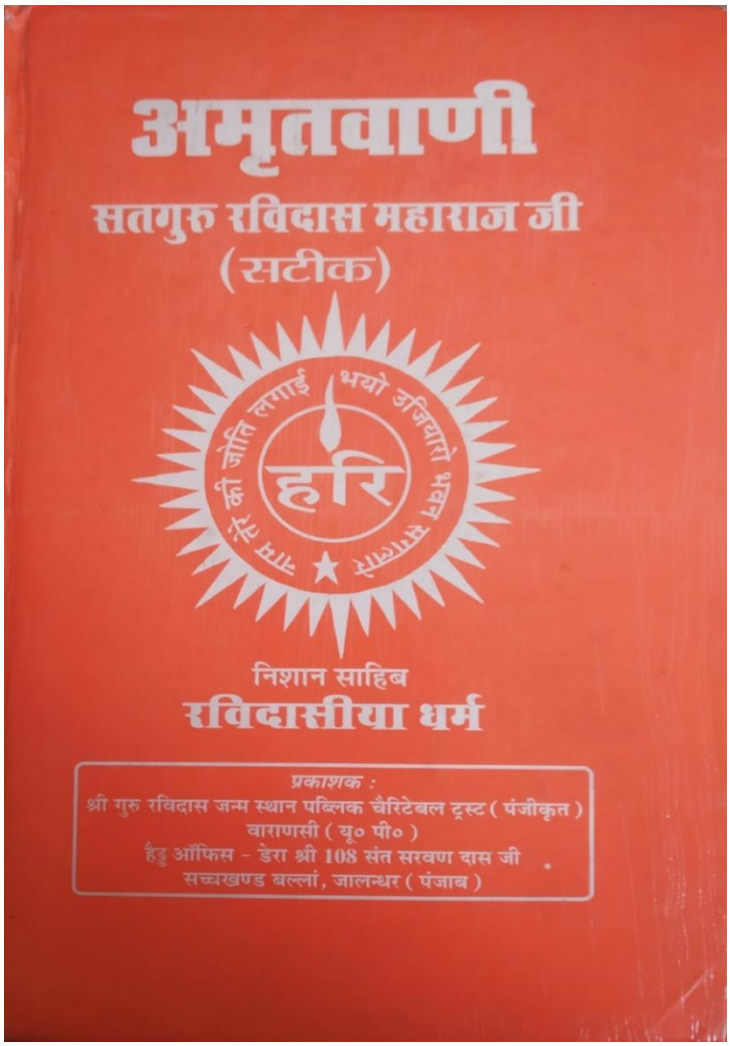

इसमे रैदासिया धर्म के सभी नियमों की जानकारी प्राप्त होती है। साथ ही गुरू संत पिप्पल दास जी, संत सरवण दास जी, हरि दास जी, संत गरीब दास जी तथा वर्तमान गद्दी नशीन संत निरंजन दास जी के विषय मे वस्तु निष्ट जानकारी मिलती है। रैदासिया धर्म के अमर शहीद संत रामानन्द दास जी के बलिदान और त्याग की भी जानकारी प्राप्त होती है।

अध्याय–4

संत रविदास मन्दिर का चित्रण

मन्दिर के अन्दर व्यवस्था–

वाराणसी स्थित संत रविदास मन्दिर में स्वर्ण कलश की छटा अत्यन्त शोभनीय प्रतीत होती है। मन्दिर बिल्कुल शिरोमणी प्रतीत होता है।

मन्दिर मे स्थित संत सरवण दास जी की प्रतिमा

संफेद संगमरमर से बने मन्दिर की ऊँचाई मानो जैसे आकाश उठाती प्रतीत होती है और उसके ऊपर स्थित सुनहरे गुम्बद अत्यन्त मनोहर लगत होती है।

मन्दिर में आगे चलकर एक द्वार पड़ता है जिसके ऊपर श्री संत शिरोमणी रविदास जी महाराज लिखा है। उसके अन्दर प्रवेश करने पर एक छोटा कमरा मिला जिसमें रैदासिया धर्म के अमर शहीद श्री 108 संत रामानन्द दास जी की अमर गाथा का पूरा वर्णन किया गया है। उसको पढ़ कर बाबा की शहीदी की बात को पूरी तरह से जानने के बाद अन्दर प्रवेश करते पर गुरू रविदास जी की अराधना में ध्यान लगाए बच्चे, बूढें और महिलाएं भी नजर आते है।

मूर्ति का स्थान–

दरवाजे के ठीक सामने गुरू रविदास जी मूर्ति स्थापित है जोकि एक पालकी जैसे शासन के ऊपर विराजमान किया है पीले रंग का वस्त्र धारण किया है जिसमें वे अत्यन्त मनोहर प्रतीत होते है। साथ ही उनके समीप कुछ वस्तुए रखी गयी है जिसमें वाद्य यंत्र, दानपात्र तथा गुरू ग्रंथ साहब इतियादि सम्मिलित है।

गुरू ग्रंथ साहब को वहां पाकर मन में प्रश्न उठता है कि गुरू रविदास जी एक अलग सम्प्रदाय के है तो सिक्खो की पवित्र पुस्तक उनके समीप क्यो रखी है ? इसके पश्चात् वहां उपस्थित वस्तुओ में गुरू पिप्पल दास जी की एक तस्वीर भी लगी है, सत्संग के समय पर प्रयोग किए जाने वाले वाघ यंत्रो को भी वहां रखा गया है।

भक्तों के लिए मन्दिर के पूरे हाल में कालीन बिछी थी, साथ ही वो कमरा इतना बड़ा और साफ–सुथरा था कि वहाँ अधिक से अधिक लोग एक साथ बैठकर गुरू की आराधना में लीन हो सकते थे।

सुविधाएं–

उस हाल में पंखे, लाइट तथा तीन तरफ से दरवाजे लगे थे, जिससे अन्दर बैठने वालो को कोई तकलीफ न हो। संत रविदास जी की मूर्ति के ऊपर एक छत्र लगा है जिसकी अत्यन्त सुन्दर नक्काशी की गयी है।

वहाँ जाकर फिर मन्दिर के मुख्य सेवाकार जी से मिलने पर उनसे मन्दिर के बारे में कुछ विशेष जानकारियां प्राप्त की। साक्षात्कार और मौखिक वार्ता के द्वारा मन्दिर के निर्माण के विषय में वस्तुनिष्ठ जानकारी दी।

मंदिर बनाने के क्या कारण थे? और मन्दिर के निर्माण में कितना समय लगा?

इस प्रश्न के उत्तर मे गुरूदेव जी ने कहा कि "मन्दिर निर्माण का कार्य 14 जून 1965 के दिन से, संत सरवण दास जी के कर–कमलों द्वारा शुरू किया गया था। हमारे लिए एवं पूरी रैदासिया कौम के लिए यह अत्यन्त गर्व का पल था जब

हमारे रहबर संत रविदास जी महाराज की जन्म स्थली 'सीर गोवर्धन' वाराणसी में उनके मंदिर का निर्माण कार्य शुरू हुआ"।

- **"रैदासिया कौम, संत सरवण जी के इस महान कार्य की और कौम से जुडे सभी भक्तो की ओर से सदैव आभारी रहेगी"।**

मन्दिर को बनाने का एक मुख्य कारण रैदासिया कौम से जूडे हुए लोगो को एक दिशा प्रदान करना था, अभी तक लोग संत रविदास जी की भक्ति के लिए किसी ऐसे स्थान की खोज में थे जिससे जुड़कर वे संत रविदास महाराज जी की भक्ति में मन लगा सके। ताकि वे किसी अन्य के अधीन और किसी अन्य के नियमों के बिना, अपने गुरू को अपने पूजा–पाठ के अनुरूप पूज सके।

साथ ही रविदास जी की वाणी, उसके ज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए तथा, बाबा सरवण दास जी के निर्देशन में यह महसूस किया गया कि यदि रैदासिया को अपने गुरू के ज्ञान को और आगे बढ़ाना है ।

इसे देश विदेश के कोने–कोने तक पहुँचाना है तथा लोगो को समाजिक द्वेष की भावना से दूर करके एक सम्मानित जीवन प्रदान करना है तो यह अति आवश्यक है, कि रैदासिया लोग अपने गुरू की भक्ति के लिए एक ऐसा स्थान चुने जहाँ वे निश्चित होकर ध्यान लगा सके। मगर मन्दिर के निर्माण का काम इतना आसान नहीं था। एक दलित संत का मंदिर बनाने का संकल्प करना और उसे पूर्ण करना दोनो ही कठिन कार्य थे।[1]

वाराणसी के लोगो द्वारा मन्दिर के निर्माण का बहुत विरोध किया गया। लोगों को यह कभी भी मंजूर नहीं था कि जहां उनके ईश्वर की पूजा होती है पंडितो और मंहतो के द्वारा मंत्रो उच्चारण किया जाते है ऐसी पावन नगरी काशी में, दलित संत

[1] गुरूदेव जी के साक्षात्कार के आधार पर

का मन्दिर बने। इसलिए लोगो ने अथक प्रयास किए जिससे यह मंदिर का कार्य अधुरा रह जाए।

बताते है कि मंदिर के निर्माण में **25 वर्षो** का लम्बा समय लगा क्योंकि यहां सेवा देने वाले लोग दिन भर जो काम करते या दीवार उठाते रात को बाहरी अराजक तत्व उसे गिरा देते। सेवाकारो को चोट पहुॅचाते ताकि मंदिर का कार्य पूरा न हो सके। **कारण था कि जो आज हम, ये इतना ऊँचा मंदिर देख रहे है, वो एक साथ निर्मित नहीं हुआ था, जमीनी विवाद के कारण ट्रस्ट के लोग थोडी– थोडी जमीन पर मन्दिर निर्माण करते** थे।" जैसे पहले एक कमरा बना जो आज मन्दिर का गृभ–ग्रह है, उसके बाद उसके साथ में दूसरा कमरा बना और ऐसे ही धीरे–धीरे करके मन्दिर का निर्माण हुआ।

- **संत रविदास जी मूर्तिपूजा के विरोधी थे परन्तु यहां मन्दिर में उनकी मूर्ति रखी है इसका क्या कारण है?**

उन्होने बताया कि ''मन्दिर का निर्माण "जब कुछ हद तक पूरा हो गया तब 1974 में संत गरीब दास जी के कर कमलो द्वारा संत रविदास महाराज जी की मूर्ति को स्थापित किया गया। यह बात सही है कि रविदास जी महाराज मूर्ति पूजा के विरोधी थे, परन्तु हमारे समाज में और रैदासिया कौम में जो लोग संगठित है जो दलित परिवेश के है जिनका ऐसा मानना है कि ईश्वर की पूजा भले ही वे नहीं कर सकते क्योंकि उनके लिए उनका ईश्वर उनका रहबर संत रविदास जी है पर वे उनकी मूर्ति को देखकर ही ध्यान लगाना ज्यादा अच्छा समझते है।

वे मूर्ति से तात्पर्य किसी पत्थर की बनी तस्वीर से नहीं लगाते बल्कि उनके अनुसार उनका रहबर उनके समक्ष बैठकर उनको देख सकता है ऐसा विचार करते हुए ही वे ध्यान लगाते है। वे कहते है कि मूर्ति देखकर वे रविदास जी से जुड़ पाते है।[2]

[2] सेवाकार अमरप्रित **के** साथ साक्षात्कार के आधार पर

यहा पर हम दो अलग–अलग मतो को देखते है। एक वो जो मूर्तिपूजा के समर्थक है और दूसरे वो जो मूर्ति पूजा को नहीं मानते। परन्तु वे अपने उत्तर से मूर्तिपूजा के बारे में जो ज्ञान दे सके **वह** हमारे लिए आवश्यक संदेश है। ‘‘

- **मंदिर में गुरू ग्रन्थ साहब क्यों रखी गयी है?**

इसके उत्तर में उन्होंने कहां कि गुरू ग्रंथ साहब भले ही हमारी कौम की आध्यात्मिक पुस्तक नहीं है परन्तु फिर भी वो हमारे लिए सम्मानीय है क्योंकि इसमें संत रविदास महाराज जी के 40 पदो को संकलित किया गया है। इसके अलावा भी गुरू ग्रंथ साहब के अन्दर कबीर रविदास जी तथा अन्य धर्मो के गुरूओं की भी वाणी संग्रहित है। इससे पता चलता है कि गुरू ग्रंथ साहब किसी एक कौम विशेष की नहीं है। और हमारे रहबर की वाणी भी उसमें दी गयी है इसलिए हम निःसकोच गुरू ग्रंथ साहब का ससम्मान पाठ करते है। हमारे गुरू रविदास जी ने अपने ज्ञान से हमें यही शिक्षा दी है कि बिना भेद भाव और ऊँच–नीच के सभी के साथ सद्भावना का व्यवहार रखना चाहिए। क्योंकि इस संसार में कोई किसी के ऊपर अपना अधिकार करने के लिए नहीं जन्मा है। प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मो का फल भोगता है तथा अपने व्यवहार के अनुरूप ही कार्य करता है। तो भला हम कैसे गुरू ग्रंथ साहब का अपमान कर सकते है। हम में से जो भी उसका पाठ करता है।[3]

तथा सत्संग में जब गुरूवाणी की जाती है। तो हम उसका उपयोग बिना भेद भाव के सिर्फ अपने रहबर की छवि को ध्यान में

रखकर करते है। और यही संदेश हम अपनी आने वाली पीढी को भी देते है।

[3] **मनप्रीत जी के** साथ साक्षात्कार के आधार पर

- **मंदिर से गुरूद्वारा किस प्रकार अलग है? यदि आप इसे मंदिर कहते है तो यहां किए जाने वाले सारे ही कार्य जैसे– सत्संग लंगर इत्यादि गुरूद्वारों की भांति क्यो है?**

इस प्रश्न का बहुत ही सुन्दर सा उत्तर देते हुए उन्होने कहा कि कोई धर्म हमें किसी मानव या जानवर को ऐसी मूलभूत सुविधा देने से मना नहीं करता। ये सत्य है कि हम वो सेवाएं प्रदान करते है जो गुरूद्वारों में दी जाती है। परन्तु हम गुरूद्वारों से अलग किसी प्रकार है।

संत रविदास जी अपनी वाणी में कहते है कि संसार नश्वर है ओर यदि हम किसी की मदद बिना किसी भेद–भाव के करेगे ते हमारा रहबर हमसे प्रशंन्न होगा। लंगर करना लोगों को रहने की सुविधा देना सत्संग करना इत्यादि ये सारे कार्य तो मनुष्य अपने रहबर की सेवा समझ कर करता है **क्या मन्दिरो में भण्डारे नहीं होते है क्या वहां प्रसाद नहीं बटता? क्या मस्जिद में रमजान के समय सब एकत्र होकर मिल बाट के खाना नहीं खाते है?**

तो फिर गुरूद्वारों और मदिरों की सेवाएं अलग–अलग कैसे हो गयी। कोई भी धर्मा हमें मिलकर रहना ही सीखाता है। इसलिए हमनें किसी गलत चीज को नहीं अपनाया बल्कि अपने गुरू जी सेवत्र का ही मार्ग ढूढा है। और हमे ऐसा लगता है कि लंगर सत्संग और सेवाएं जो किसी भी धार्मिक स्थल 40 दी जाती है उनके नाम भले ही अलग–अलग हो परन्तु वे सब एक ही दिशा दिखाती है जो मनुष्य को उसके रहबर से जोड़ती है। और इसे हम किसी भी भाषा या आधार में गलत नहीं मान सकते।

- **मन्दिर के रख–रखाव तथा अन्य सेवाओं के लिए पैसा कौन देता है? इसमे ट्रस्ट की क्या भूमिका है।**

मन्दिर की सेवा और मन्दिर के द्वारा दी जाने वाली सेवाएं सभी के खर्च का कार्य किसी एक पर नही हैं। ‘‘हमारी ट्रस्ट जो **“ हेड ऑफिस डेरा श्री 108 संत सरवण दास जी सच्चखण्ड बल्ला जालन्धर (पंजाब)“** में स्थित है उसके कर–कमलो

द्वारा यह कार्य पूर्ण कुशलता से सम्भव होता है साथ ही भक्तो के हार दिया गया दान तथा विदेशो द्वारा आने वाला चैरिटेबल ट्रस्ट का पैसा इत्यादि सभी कुछ मिला कर, यहाँ सेवाएं दी जाती है साथ ही कभी ऐसा वही हुआ कि किसी भी तरह की कोई कमी आयी है। सभी अपना–अपना कार्य पूरी निष्ठा से कहते है। और ट्रस्ट के द्वारा तथा कुछ महान भक्तो के द्वारा जो रविदास जी की सेवा करने के लिए अपनी जमीन तक दान में दे देते है रैदासिया कौम उनका धन्यवाद करता है।

साथ ही विदेशो में जो हमारी ट्रस्ट काम करती है वे इतनी मदद करती है कि मंदिर को कभी कोई कमी नही होती।

वाराणसी स्थिति रविदास मन्दिर

मंदिर में लगने वाले सफेद संगमरमर तथा स्वर्ण का बना गुम्बद, जिनकी सख्या **32** है ये सभी कुछ ट्रस्ट दिया गया है। चूकि वाराणसी ही रविदास महाराज जी की जन्म स्थली है इसलिए यहा कि सेवा का ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया जाता है। ऐसा नहीं है कि अन्य रविदास मन्दिरों पर ध्यान नहीं दिया जाता बल्कि यहां लोगो का हुजूम झाकियो के समय बहुत रहता है इसलिए हमे अपनी सेवाएं अच्छे से अच्छे ढ़ग से देनी होती है ताकि ज्यादा से ज्यादा भक्त बिना किसी असुविधा के यहां आ सके और गुरू जी दर्शन कर सके। "

- **इस मंदिर में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी तथा उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री आदित्य नाथ योगी भी आ चुके है इसके बारे में आपकी क्या राय है। क्या वे इस मंदिर मे आकर कोई राजनीतिक छवि प्रस्तुत करना चाहते है?**

"इस बात पर मुस्कुराते हुए उन्होने कहा कि जिस समय सालो पहले गुरू रविदास जी अपनी ज्ञान की ज्योति से समाज को रौशन कर रहे थे, उनके ज्ञान और चमत्कारिक दिव्या शक्तियों का लोगो के मन पर इतना अधिक प्रभाव पड़ता था कि वे स्वतं ही रविदास जी महाराज के दर्शन के लिए खींचे आते है। उन्होने रविदास महाराज से शिक्षा की परन्तु उस शिक्षा को क्या उन्होने आगे बढ़ाया क्या वे यह नहीं जानते थे कि जिस परिवेश से रविदास जी जुडे थे उनको और उनके ज्ञान को लोगो तक पहुचाना क्या उनका कर्तव्य नही था मीराबाई, झाली देवी इत्यादि लोग जो ऊँचे–ऊँचे घराना से थे इन्होने रविदास के ज्ञान को बढ़ाने में क्या योगदान दिया।"[4]

आज जब बडे–बडे मंत्री यहाँ आते है तो वे भले ही किसी भी मकसद से आते हो रविदास जी का मंदिर उनका आदर सत्कार कर उनका स्वागत करता है परन्तु यह विशेष रूप से बात है कि मन्दिर को राजनीति से जोड़कर किसी को भी नहीं देखना चाहिए। रैदासी कौम सभी का सम्मान करती है, व्यक्ति का पद उसकी प्रतिष्ठा से अधिक व्यक्ति की रैदास महाराज जी के प्रति निष्ठा से है।

मंत्रियो का यहा आना, दर्शन करना प्रेस के माध्यम से दुनिया के कोने–कोने तक पहुचता है जिससे समाज में समानता का संदेशफैलता है। रैदासिया कौम के लिए यह अच्छा संदेश है।

साथ ही गुरूदेव कहते है कि रैदासिया कौम हमारे देश के पूर्व राष्ट्रपति **"श्री के. आर. नारायण जी"** को भी धन्यवाद देती है जिन्होने वाराणसी में ईट–पत्थरो से निर्मित भव्य गेट बनवाया जिसका नाम संत रविदास जी महाराज द्वार रखा गया।

[4] सरिता देवी **के** साथ साक्षात्कार के आधार पर

- **एक भक्त से बात करने पर पूछा गया कि क्या आप अपने परिवार के साथ यहां हमेंशा आते है? और आप लोग रविदास जी को हिन्दू धर्म के भगवानों से कितना भिन्न मानते है?**

ऐसा प्रश्न सुनकर उन्होने कहा कि ‘‘हम दलित परिवार है हमे दुनिया से ज्यादा मतलब नहीं है। हम गरीब लोग है जो एक सामान्य जीवन खुशी–खुशी व्यतीत करना चाहते है संत रविदास जी हमारे गुरू है और वही हमारे भगवान उन्होंने जो ज्ञान दिया है वही सत्य है बाकी हम किसी भी ऐसे समाज के अनुयायि नहीं है जो किसी को कष्ट पहुचाएं।’’

- **सेवाकारो से बात करने पर पूछा गया कि आप यहां कब से काम कर रहे है, आप यही काम क्यूं कर रहे है? क्या रविदास जी को आप किस रूप मे देखते है, सतं या भगवान।**

लंगर हॉल

शिवराज ने इस बात का बहुत ही सुन्दर उत्तर देते हुए कहा कि ‘‘प्रत्येक मनुष्य को जीवन यापन करने के लिए कोई न कोई नौकरी तो करनी पड़ती है, और मै तो अपने आप को धन्य मानता हूँ जो सेसे में मुझे रविदास जी महाराज की सेवा करने

का सुअवसर प्राप्त हुआ है। मेरे घर के लोग भी मेरे इस कार्य से खुश है वे मुझे भाग्यवान समझने है कि तुम संत रविदास जी की सेवा में हो।

और रही बात पैसो कि तो यहां रहना–खाना सब होता है और जो पैसे मिलते है उसमें से मेरे घर का भरण –पोषण आराम से हो जाता है मैं अशिक्षित हूँ ज्यादा तो ज्ञान नहीं है पर यह जरूर जनता हूँ कि अपना काम हर मनुष्य को नेक तरीके से करना चाहिए। काम कौन सा है और कितना है यह कोई बात नही होती है मैं और मेरा परिवार बहुत खुश है मैं शायद किसी और नौकरी मे होता तो अपने परिवार को समय नही दे पाता। मेरा परिवार पंजाब में रहता है और मैं यहां बाबा जी की सेवा करता हूँ। और समय–समय पर उनसे मिलने भी जाता रहता हूँ।''

- **रविदास घाट पर सविता देवी जी से बात करने पर उनसे रविदास जी की भक्ति और दलितो से उनका कितना जुडाव है?**

पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया कि ''वे उत्तर प्रदेश के ही किसी छोटे कस्बे से वहां परिवार के साथ रविदास जी के दर्शन को आए है तथा हम रविदास घाट पर उनके दर्शन करना चाहते थे इसलिए यहां आए उन्होंने बताया कि वे रविदास जी को दलित संत के रूप मे बहुत आदर करते है। क्योंकि वे स्वयं भी दलित है इसलिए यहां उनसे कोई ये नहीं पूछता है कि तुम किस जाति के हो या तुमहारा पूरा नाम क्या है। हमे लोग बुध जी को भी मानते है उनमे और रविदास जी की भक्ति में अन्तर है पर हमारा उससे कोई खास मतलब नहीं है क्योकि हम लोग भाक्ति से ज्यादा उसके पीछे की आस्था पर ध्यान रखते है।

यहां तक कि हम होली, दीवाली और नवरात्र भी मनाते है। हाँ हम दलित है और रैदासिया कौम का हिस्सा भी है परन्तु हम हिन्दू धर्म के है जिसमे भगवान को बहुत ऊँचा माना गया है हम भगवान भक्ति के साथ–साथ बुद्ध और रविदास को मानते है। और हमे ऐसा करना गलत नही लगता है।''

इस प्रकार अपने वाराणसी के मन्दिर कार्य पर जो साक्षात्कार और मौखिक कार्य पर जो साक्षात्कार और मौखिक वाताएं की उससे ज्ञात होता है कि लोग

रैदासिया कौम में स्वयं ज्ञात होता है कि लोग रैदासिया कौम मे स्वयं को ज्यादा सुरक्षित मानते है बजाय किसी और कौम या धर्म के। और लोग इससे जुड़कर खुश भी है। मंदिर के सभी कार्य अपने समय पर होते है। किसी के लिए भी ऐसे कड़े नियम नहीं है कि वो यदि किसी दूसरे धर्म–जाति का है तो वो उस मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकता।

रैदासिया लोगो ने अपनी मानसिकता को बहुत उच्च कोटी को बना लिया है वे किसी पर निर्भर रहने के बजाय खुद कार्य करना ज्यादा सही समझते है साथ ही उन्होंने सामाजिक और धार्मिक भेद–भाव की उन जंजीरो को तोडने का प्रयास किया है जो उनको पीछे खींचती थी।

अध्याय–5

मन्दिर के निर्माण संघर्ष की जानकारी

भक्ति आन्दोलन और संत–

13 वीं सदी के बाद उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन की लहर चली, यह वो समय था जब इस्लाम, ब्राह्ममणवादी हिन्दू धर्म, सूफीवाद इत्यादि भक्ति की विभिन्न शाखाओं ने और नाथ पंथियों, सिखों तथा योगियों ने परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करने का काम किया।

भक्ति आन्दोलन में जिन लोगों का नाम विशेष उल्लेखनीय है वे कबीर, गुरू नानक, गुरू रविदास जैसे महान संत हुए जिन्होने सभी आडंबरपूर्ण रूढ़िवादी धर्मो को अस्वीकार किया तथा दूसरो को भी यही संदेश दिया कि वे ऐसे भ्रमित करने वाले धर्म और धर्मावलम्बियों से दूरी बनाए रखे। कुछ संत ऐसे भी थे जो ईश्वर भक्ति में आडम्बरहीन मार्ग को आगे बढाते थे जिसमे दादू दयाल, रविदास और मीराबाई जैसे सन्त भी शामिल थे। मीराबाई एक राजपूत राजकुमारी थी जिनका विवाह 17वीं शताब्दी में मेवाड़ के एक राजसी घराने मे हुआ था। वे रविदास जो ''अस्पृश्य जाति'' के माने जाते थे उनकी अनुयायी बन गई तथा कृष्ण के प्रति समर्पित होकर अपने गहरे भक्ति भाव को कई भजनों में अभिव्यक्त किया। उनके गीतों ने उच्च जातियों के रीति–रिवाजों, नियमों आदि को चुनौती दी जो राजस्थान व गुजरात में बहुत लोकप्रिय हुई । रविदास जी और मीराबाई के इस गुरू–शिष्य के रिश्ते को इतिहास में वर्षों तक याद रखा जायेगा। क्योंकि इन्होनें समाज में ऊँच–नीच की बेड़ियों को तोड़कर छुआ–छूत से परे हटकर सिर्फ गुरू शिष्य के रूप में ईश्वर भक्ति में लीन होकर समाज को जगाया। मीराबाई ने एक चमार जाति के संत श्री रविदास जी को गुरू मानकर उनके सत्संगों के माध्यम से सामाजिक भेद–भाव को जाना तथा आडम्बरहीन कृष्ण भक्ति को सफल किया।

जिस समय देश अलग–अलग धार्मिक आडम्बरों के चलते अन्य धर्मों तथा ऐसे सम्प्रदायों को ग्रहण कर रहा था उसी समय सन्त रविदास ने उत्तर भारत के कई हिस्सों में भक्ति आन्दोलन का चोला पहनकर लोगों को हिन्दुत्व की ओर

लौटने का सन्देश दिया। उन्होने अपनी वाणी के माध्यम से लोगों को जोड़ा तथा मुगलकाल में बढते इस्लामिक साम्राज्य के अत्याचारों को कम करने तथा सामान्य जनता को उसके अधिकारों का हक़ दिलाने के लिए समाज को संगठित किया। तथा ''उस समय भक्ति आन्दोलन के नायक के रूप में संत रविदास उभरे'' बदलते समय में रविदास जी ने अपनी वाणी से भी लोगों को आकर्षित किया और समाज में व्याप्त भिन्न–भिन्न प्रकार के धार्मिक आडम्बरों का खंडन किया। इस प्रकार उन्होंने देश तथा समाज को अपने विचारो के माध्यम से छुआ–छूत से मुक्त रहने का भी प्रयत्न किया।

यही कारण था कि सन्त रविदास को लोगों ने भगवान तुल्य माना और उनकी पूजा आरम्भ कर दी। इनकी मृत्यु से पहले ही लोगों ने इनको सन्त शिरोमणि का ताज देकर इनकी आराधना शुरू कर दी थी। यह बात किसी चमत्कार से कम नहीं थी। कि ऐसे समाज में जहाँ ऊँच–नीच, धर्म जाति का इतना बोल–बाला हो वह समाज किसी दलित संत को भगवान तुल्य मानने लगे तथा उसकी पूजा शुरू कर दे। यह बात श्री रविदास जी के बड़े संघर्षों की साक्षी है।[1]

जन्म स्थान को लेकर मतभेद–

बनारस स्थित ''सीर गोवर्धन'' में जहाँ सन्त रविदास का जन्म स्थान माना जाता है, वहाँ के कार्य सेवकों ने अपनी कथायें बताई तथा सत्य आधारित घटनाऐं बताई इनकी पुष्टी हमें किताबों द्वारा भी होती है। वहाँ के कार्य सेवक जो कि संत रविदास मन्दिर के रख–रखाव, पूजा अर्चना, लंगर, सत्संग इत्यादि की देख–रेख करने वाले लोग थे, उन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन रविदास जी के चरणों में तथा रैदासिया धर्म को समर्पित कर दिया हैं।[2]

मन्दिर के स्थान तथा उसके निर्माण को लेकर अलग–अलग लोगों में अलग–अलग बातें प्रचलित है, कुछ तो तथ्य आधारित हैं तथा कुछ मात्र कथा जान पड़ती है। प्रचलित स्त्रोतों की बात मानें तो संत रविदास जी के जन्म का स्थान

[1] संत रविदास महाराज
[2] साक्षात्कार द्वारा

सीर गोवर्धन को माना जाता है। वहीं कुछ लोग बनारस के रविदास घाट के पास भी उनका जन्म स्वीकार करते हैं। हालाकि इस विषय में अन्तरद्वन्द्व है परन्तु अपनी सन्तुष्टि और सही परिणाम प्राप्त करने के लिए, रविदास जी के जीवन पर लिखी पुस्तक जो कि उनके वाराणसी स्थित चौरिटेबल ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'अमृतवाणी' नाम से है, जिसमें सीर गोवर्धन को जन्म स्थान स्वीकारा गया है। तथा रविदास घाट को भी रविदास जी से जुड़े स्थल के रूप में मान्यता प्राप्त है। (परन्तु यह जन्म स्थली नहीं है।)

वर्तमान नाम **नगवा** क्षेत्र में रविदास घाट स्थित है यह संत रविदास जी की याद में निर्मित किया गया है साथ ही बाद के वर्षों में यहाँ सन्त रविदास के नाम से एक पार्क स्थल का निर्माण कराया गया है।

संत रविदास घाट वाराणसी

जो कि प्राकृतिक सौन्दर्य का एक अत्यन्त अनुपम उदाहरण है।[3] यह देखने वालों के लिए ध्यान और आकर्षण का केन्द्र बिन्दु है। इस प्रकार भले ही इतिहासकारों के मतों मे विभिन्नताएं हैं परन्तु प्रयुक्त साक्ष्य पुस्तक **अमृतवाणी** को अधिक मान्यता प्राप्त होने के कारण इस कथन की पुष्टि की अधिक सम्भावना है।

संघर्ष की कथा–

पूर्व. आई जी श्री एस. आर. दारापुरी

एक साक्षात्कार में श्री एस0 आर0 दारापुरी जी से प्रत्यक्ष बात करके यह जाना कि उस समय सन्त रविदास जी के नाम पर एक डेरा भी काम करता था। जो पंजाब में स्थित था। जिसके अर्न्तगत एक पूज्य पुजारी होते थे जो मन्दिर, **ट्रस्ट** इत्यादि देखते थे। इन्होने ही मिलकर तय किया कि **काशी और हरिद्वार** में सन्त रविदास जी के मन्दिर बनवाए जायेगे। इसमें दो प्रमुख नाम सामने आते है। एक डेरा बल्ला तथा दूसरा डेरा हरि जो कि फुल्लौर की ओर आते हुए पड़ते है।[4] इसकी पुष्टी भी 'अमृतवाणी' पुस्तक से होती है। जिसमें स्वामी सरवणदास जी, स्वामी हरिदास जी और स्वामी गरीबदास जी ने विचार कर काशी में गुरू रविदास जी के जन्म स्थान पर एक मन्दिर बनाने की योजना बनायी। इस प्रकार सभी ने एक मत होकर काशी में सन्त रविदास जी का एक भव्य मन्दिर बनवाया।[5]

---

3 भारतकोष , विकीपीडिया

4 साक्षात्कार

5 अमृतवाणी सतगुरू सतगुरू रविदास महाराज जी सष्टीक

परन्तु इसके निर्माण मे बहुत से संघर्षों को भी देखा गया। मन्दिर के निर्माण में सबसे प्रमुख बाधक **शंकर दास** नामक एक व्यक्ति था। जिसने मन्दिर निर्माण में बाधा पहुचाने का हर सम्भव प्रयास किया। जहाँ सभी रैदासिया अनुशासित होकर पूरी मेहनत लगाकर तथा थोड़ी–थोड़ी पूँजी एकत्रित करके मन्दिर निर्माण का कार्य करते थे वहीं कुछ स्थानीय लोग जिसमें बाधक का भी कार्य करने मे पीछे नहीं थे।

सीर गोवर्धन संत रविदास चरण पादुका

रविदास जी के कार्यो सम्बन्धी औजार–

14 जून 1965 को आषढ़ की संक्रांति के दिन श्री 108 संत हरिदास जी के कर कमलों से मन्दिर की नींव रखवायी गयी। नींव रखवाने से पूर्व वह स्थान 'सीर गोवर्धन' के नाम से रविदास जी की जन्म स्थली के रूप में प्रसिद्ध था।[6] परन्तु जब बाद में वहाँ खुदाई की गई तो रविदास जी के पैतृक व्यवसाय जूता सिलने के औजार जैसे **रापी** (चमड़ा काटने का औजार), **आर** (चमडे मे छेद करने का औजार), **टामडा** (सुई की तरह दिखने वाला औजार), **कठौती** (जिसमे पानी भरकर रखा जाता है) तथा एक खूँटा प्राप्त हुआ। जिसमें सम्भवतः कोई जानवर जैसे बकरी बंधी होती होगी। इन सभी सामग्रियों के प्राप्त होने से लोगों में मन्दिर निर्माण का

[6] सत्य घटना पर आधारित बेगमपुरा पत्रिका

उत्साह दो गुना हो गया तथा उन्होने अपनी पूरी क्षमता व लगन से कार्य शुरू कर दिया।[7]

सन् 1979 में बनारस में 34 बटालियन में कमान्डेन्ट के पद पर नियुक्त होकर श्री **एस0 आर0 दारापुरी** जी का वाराणसी में तबादला हुआ। मन्दिर निर्माण का कुछ भाग प्रत्यक्ष रूप से उनके द्वारा देखा व सुना गया है। जब यहाँ मन्दिर निर्माण का कार्य चल रहा था। तब बहुत से अप्रत्याशित दंगे भी हुये, जो नहीं चाहते थे कि किसी निम्न जाति के संत का मन्दिर किसी भी हाल में बनारस जैसी ब्राह्मण अधिपत्य वाली नगरी में बनें। सीर गोवर्धन के पास निवास करने वाले कई असामाजिक तत्वों ने पथराव किया तथा पानी की आपूर्ति को भी बाधित किया, हर सम्भव प्रयास के द्वारा सेवाकारों को नीचा दिखाने का प्रयत्न भी किया गया तथा इस सभी का नेता शंकरदास ही था। इसने लोगों को भड़काया तथा जमीन को अवैध रूप से हथियाने की बात करके लोगों को डराया व धमकाया।

कई ऐसे वाकिये भी हुये जो रैदासियों कि हिम्मत तोड़ देते थे जैसे उस समय रविदास जी के जन्म उत्सव के पर्व पर लोगों के मनोरंजन तथा उत्साहित माहौल को विभिन्न तरीको से बाधित किया जाना। शंकरदास पहले भी प्रशासन के कान भर चुके थे। तथा स्थानीय जनता को अपनी ओर शामिल कर चुके था। परन्तु डेरे की तरफ से **भोलाराम** नामक एक व्यक्ति के आने से जमीन के अवैध कब्जे और मेले एवं आयोजन दोनो की ही दिक्कते दूर हो गई। इसमें बनारस पुलिस का योगदान सराहनीय रहा।

मन्दिर निर्माण मे डेरे का सहयोग–

मन्दिर निर्माण के लिए पैसा डेरे से आता था, क्योंकि यहाँ स्थानीय मदद मिलना अत्यन्त मुश्किल था। ऐसे में लोगों के पैसो को बचाकर रखना तथा सेवाकारों की सुरक्षा भी एक बडा विषय था। इसलिए दारापुरी जी के आग्रह पर वहाँ पुलिस निगरानी के लिए लगाई गई परन्तु खौफ इतना था कि सेवाकारों को उस परिधी से बिना पूछे बाहर जाने की अनुमति नहीं थी जहाँ मन्दिर निर्माण कार्य

[7] अमृतवाण, Place of Pilgri mage

चल रहा था। **बन्ताघेडा** नामक व्यक्ति के कहे अनुसार वहाँ के लोगों ने जमीन पर कब्जा कर लिया था। दंगों का खौफ इतना था कि सेवाकार पंजाब से बनारस आते थे और दिन भर मन्दिर बनाने में अपनी सेवा देने के बाद रात मे ही वापस पंजाब लौट जाया करते थे। अगले दिन नये लोग पंजाब से आते थे और अपनी सेवा देते थे। उपरोक्त बात, विचार करने में ही कितनी गंभीर लग रही है। परन्तु मन्दिर निर्माण का संघर्ष प्रत्यक्ष रूप में इससे कई गुना अधिक थी।

मन्दिर द्वारा दी जाने वाले सेवाएं–

मन्दिर से लोगों को जोड़ने के लिए **संत पिप्पलदास** जी को इस बात का पूर्ण विश्वास था कि बनारस नगरी ही वह स्थान है जहाँ गुरू रविदास जी ने अपना जीवन व्यतीत किया था। हाँलाकि इतिहास मे मतभेद जरूर है परन्तु पिप्पलदास जी की वाणी और 108 सच्च खण्ड द्वारा दिये गये प्रमाणों में बनारस को ही उनकी जन्म स्थली माना गया है।

इसके पश्चात मन्दिर के निर्माण का कार्य **संत हरिदास** जी ने **संत गरीबदास जी** के साथ संगत भेजकर कराया जिसमे संघर्षरत सेवाकारों को बलिदान भी देना पड़ा**,** यह कार्य इतना मुश्किल था। परन्तु संत रविदास जी के आर्शीवाद के कारण ही लोगों को यह हौसला मिला, कि वे पूरी निष्ठा के साथ मन्दिर निर्माण के कार्य को पूर्ण करा पाये। परन्तु सिर्फ यही एक कारण नहीं था मन्दिर के बनने में लगने वाला सामान जैसे गारा, मिट्टी, पानी, लकड़ी इन सबकी व्यवस्था तथा इन सभी सामानों का आवागमन भी एक मुश्किल कार्य था। मन्दिर निर्माण के लिए डेरे से जुड़े सभी सेवाकारों ने बहुत प्रयास किया इसके अलावा भारत के साथ–साथ विदेशों मे वास करने वाले रैदासियो ने भी अपनी सामर्थ के अनुसार बिना किसी भेद–भाव के सहयोग किया इनमें **कनाडा, अमेरिका, न्यूजीलैण्ड** इत्यादि के भक्तों की संख्या प्रमुख थी।

वाराणसी स्थित संत रविदास जी का निर्माणाधीन मन्दिर

पहले चरण का पूर्ण होना–

सन् 1972 में **मन्दिर के निर्माण का पहला चरण** पूर्ण हुआ इस खुशी के मौके पर उस समय गद्दी पर आसीन **बाबा श्री 108 संत गरीबदास जी** के कर कमलों से सभी संतों, पंजाब के सभी डेरों तथा बड़ी संख्या में रैदास जी के भक्तों एवं सेवाकारों ने अपनी उपस्थिती दर्ज करायी। इस भव्य समारोह में **संत_गरीबदास जी ने मन्दिर के गर्भ गृह में संत रविदास जी की मूर्ति को स्थापित कराया।** यह सभी रैदासिया समाज और इन सभी लोगों के लिए हर्षोउल्लास का समय था जब उनके गुरू को मन्दिर में

स्थापित करके मन्दिर निर्माण का कार्य पूर्ण किया गया। इसके साथ ही **स्वामी सरवणदास जी की मूर्ति को भी स्थापित** किया गया।[8] उनका अतुलनीय योगदान भी प्रशंसनीय है उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन रविदास जी की सेवा और भक्ति में लगा दिया है और डेरे से जुड़कर बहुत से कल्याण के कार्य भी किये । इसलिए ऐसे भक्त की मूर्ति को भी सन्त रविदास जी के साथ स्थापित करके एक अलग स्थान दिया गया।

[8] तत्रैव

वर्तमान में मन्दिर निर्माण का दूसरा चरण 1993 में पूर्ण हुआ और इसी के साथ–साथ 7 अप्रैल 1994 में बाबू काशीराम जी के द्वारा मन्दिर के ऊपरी भाग में एक स्वर्ण कलश स्थापित किया गया। यह अतुलनीय कार्य मन्दिर को पूर्ण बनाता है।[9] उस समय उपस्थित संत डेरा सच्च खण्ड बल्ला तथा रविदास जी के भक्तों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई एवं देश विदेश मे भी मन्दिर के निर्मित होने की खुशी को लोगों ने अत्यन्त सौहार्दपूर्ण से स्वीकारा और दान **पुण्य** के माध्यम से अपना सहयोग भी प्रकट किया।

[9] तत्रैव

दूसरे चरण का पूर्ण होना–

दूसरे चरण में लगे सोने के कलश की शोभा का वर्णन कई रैदासिया किताबों में किया जाता है। वहाँ के सेवाकारों से साक्षात्कार के समय भी उन्होनें सोने के बने कलश का उल्लेख किया है। तथा उसकी उपमा सूर्य की किरणों के रूप में किया है। उन्होने वहाँ के मन्दिर के शिखर पर विराजमान स्वर्ण कलश के बारे मे यह कहा है कि मानों वह सूर्य की चमक हो तथा सफेद संगमरमर से बने मन्दिर के ऊपर सुशोभित है। जो कि रैदासियों के संघर्ष का **भी** परिचय देता है।

यह शिखर प्रकृतिक छवि में और भी सुन्दर प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त 625वें गुरू रविदास जयंती पर्व के अवसर पर मन्दिर के आगे वाली दीवार के ऊपर ट्रस्ट के पुरूषार्थ द्वारा करीब 25 लाख रू0 की कीमत से मार्बल भी लगाये गये। और मन्दिर के सभी छोटे–बडे गुम्बदों पर **31 स्वर्ण कलश** भी लगाये गये जिन्हें विभिन्न राज्यों से आये महापुरूषों ने गुरू जी की सेवा में अर्पित किया। इतनी ऊँचाई पर निर्मित होने के कारण यह दूर से ही लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना रहता है।

मन्दिर में सुबह शाम सत्संग होता है और इस सत्संग में गुरू रविदास जी की वाणी और उनके दोहों को गाया जाता है। वहाँ आये एक भक्त से यह पता चला कि सत्संग मन को शान्ति प्रदान करने वाले तथा सामाजिक ऊँच–नीच से परे सद्भावना का संदेश देने वाले होते है। यहाँ हमेशा ही भक्तों का ताँता लगा रहता है। यात्री निवास में पंजाब, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश जैसे अलग–अलग राज्यों से आये लोगों को रविदास जी के दर्शन के लिए आते देखा गया है। एक हिन्दू परिवार से बातचीत के दौरान पता चला कि वे हर माह रविदास जी के दर्शन के लिए वहाँ आते हैं। सत्संग में प्रसाद आदि का भी प्रबंध रहता है लोग रविदास जी की प्रतिमा के समक्ष बैठकर गुरू वाणी को सुनते हैं।[10]

रविदास जी अपनी वाणी और दोहो के माध्यम से समाज में जागरूकता लाने का प्रयास कर रहे थे वह उनके सत्संग के माध्यम से लोगो तक आज भी पहुँच

[10] साक्षात्कार

रहा है वे जिस ऊँच–नीच और जाति भेद–भाव के खिलाफ थे उन्होने उसे दोहों मे परिवर्तित कर कहा–

''जब जन्में तउ सूदर थे, अरू थे मति अपवित्र।

वरण करम सो होत है, रविदास करौ जऊनित।।

अर्थात 'जब जन्म हुआ तब सभी शूद्र और अपवित्र थे। रविदास जी कहते है वर्ण तो कर्म से बनता है जिसे हम रोज करते है।'

इसी प्रकार एक और दोहे मे रविदास जी प्रसन्नता के भाव को प्रकट करते हुए कहते हैं।

''ऐसा चाहूँ राज मैं मिले सब्ब को अन्न।

छोटा–बड़ा सुखी रहे रविदास रहे प्रसन्न।।

अर्थात 'रविदास जी ऐसा राज्य चाहते है जिसमे सबको रोटी मिले, गरीब अमीर सब सुखी रहें तथा सम्पूर्ण राज्य प्रसन्नता पूर्वक रहें।'

अर्थात उनकी वाणी दोहों के माध्यम से जन जागरण को जाति भेद से दूर रहने का संदेश दिया जा रहा है। साथ ही उनकी आरती और भजन के माध्यम से भी लोगों में रविदास के प्रति समर्पण की भावना जाग्रत होती है।[11]

[11] रविदास जी जीवन चरित्र एवं रविदास वचनामृत

रविदास जी की मूर्ति के समीप गुरू ग्रंथ साहब

मन्दिर मे गुरू ग्रंथ साहब का स्थान–

मंदिर में गुरू ग्रंथ साहब भी रखी गयी थी जो रविदास जी की मूर्ति के समीप है जिसके बारे में पूछने पर पता चलता है कि भले ही **गुरू ग्रंथ साहब** सिक्खों की आध्यात्मिक पुस्तक है परन्तु आपसी भाईचारे और रविदास जी की वाणी भी उसमे लिखी गयी है। कुल **40 पदो** का उल्लेख गुरू ग्रंथ साहिब में रविदास जी द्वारा दिया गया है। साथ ही अन्य धर्म के लोगो ने भी इसमे अपने उच्च विचारो को संग्रहित किया है इस कारण गुरू ग्रंथ साहिब किसी एक कौम को समर्पित न होकर सभी लोगो और कौम को अपनी अच्छी विचारधारा के संदेश देती है यही कारण है कि गुरू ग्रंथ साहब का पाठ भी सत्संग में किया जाता है। यह एक भाई चारा प्रदर्शित करने तथा लोगो को एक दूसरे से मिलाए रखने का भी संदेश देता है।

मंदिर के बगल में ही कुछ दूरी पर यात्री निवास स्थल है यह 4 मंजिला इमारत यात्रियों को सुविधा के लिए उनके रहने के लिए बनाया गया है। मंदिर बनने के बाद जैसे–जैसे लोगो का वहां आना शुरू होता गया तब और जरूरत के अनुसार लोगो को निवास की सुविधा देना डेरे का कर्तव्य था। इसके अलावा एक मंजिला इमारत का निर्माण और किया गया जिसमे प्रत्येक तल पर 11 कमरो का प्रबंध किया गया। यहां कार्य करने वाले सेवाकारों के अपने–अपने कार्य है जिनको

वे समय पर पूरा करते है बडे हॉल में गड्डे चादर, तकिए इन सभी का प्रबंध है।[12] जहां आप बिना कोई राशि जमा किए निवास कर सकते है। यात्रियों की सुविधा हेतु ट्रस्ट द्वारा किए गए इस नेक काम के लिए देश–विदेश से लोग अपनी –अपनी सहूलियत के अनुसार सहयोग करते हैं।

इसके अतिरिक्त बनारस शहर में तीर्थ स्थानो के दर्शन के लिए एक मिनी बस को भी चलवाया गया। जिससे दुनिया भर के श्रृद्धालू, जिज्ञासुक खोजकर्ता तथा सैलानियों की सुविधा को ध्यान में रखकर शुरू किया गया है।[13]

यहाँ की लंगर व्यवस्था के लिए एक लंगर हॉल नामक अलग इमारत बनी हुई है। यह इमारत दो मंजिला बनी हुई है मंदिर निर्माण के बाद लोगो को यहां आना तीव्रता से बढ़ने लगा इसके लिए यात्रियों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए 100 फुट लम्बे तथा 65 फुट चौड़े लंगर हॉल की नींव रखी। 1998 में संत निरंजन दास जी के कर कमलो से यह कार्य प्रारम्भ हुआ तथा 1999 में इसको निर्मित कर दिया गया इसका उद्घाटन सन् 2000 में किया गया जोकि श्री 108 संत निरंजन दास जी महाराज गद्दी नशीन डेरा सच्च खण्ड बल्ला और अध्यक्ष श्री गुरू रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट के कर कमलो द्वारा रविदास जयंती पर्व के अवसर पर लाखो श्रद्धलुओं और संत समाज की उपस्थिति में पूर्ण हुआ और इसकी दूसरी मंजिल का निर्माण 2002 तक पूरा हो गया। लंगर खाने के लिए यात्रियों को कोई असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता है। सभी कार्य पूरी सुविधा के साथ सम्पन्न किए जाते है।

इसके अतिरिक्त मंदिर के बगल में ही एक किताबो की दुकान है जहाँ से रविदास जी से सम्बधित आध्यत्मिक किताबे एवं पत्र–पत्रिकाएं उपलब्ध है जो बिल्कुल वस्तुनिष्ठ है क्योंकि इस सबका प्रकाशन श्री गुरू रविदास जन्म स्थान पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (पंजीकृत) वाराणसी यू.पी. द्वारा प्रकाशित है।

[12] अमृत वाणी सतगुरू रविदास महाराज जी (सटीक) पृष्ठ 22, 23
[13] तत्रैव 24, 25

आस–पास सभी सुविधाओं के लिए अन्य छोटी–बड़ी दुकाने निर्मित है मंदिर निर्माण में हुए संघर्ष तथा संत रविदास जी की बढ़ती लोकप्रियता ने देश–विदेश के लोगो को मंदिर और रैदासिया धर्म से जुड़ने के लिए प्रेरित किया।

वाराणसी स्थित संत रविदास गेट का राष्ट्रपति द्वारा लोकार्पण

इसे रविदास जी के अनुयायी अत्यन्त गर्व की बात समझते है। कि **10 जुलाई 1998 में देश के राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायण जी के कर कमलो से वाराणसी स्थित लंका नामक स्थान पर एक पत्थरों से निर्मित विशाल गेट का निर्माण हुआ जो रैदासिया कौम के लिए अत्यन्त भाव–विभोर करने वाला समय था।** इस पावन अवसर पर रविदास के भक्तो सहित संत निरंजन दास जी, संत रामानन्द जी एवं संत सुरीन्द्रर दास जी भी वहाँ मौजूद थे। इन्होनें राष्ट्रपति जी को सम्मान स्वरूप श्री गुरू रविदास जन्म स्थान मंदिर का स्वर्ण मॉडल सप्रेम भेंट किया इस समय पर गद्दी नशीन डेरा संत सरवण दास जी सच्च खंड बल्ला जालधंर पंजाब । साथ ही रविदास कौम के अमर शहीद संत रामा नंद जी मानीय काशी राज जी की उपस्थिति में रविदास जन्म स्थान मंदिर का स्वर्ण मॉडल सप्रेम भेंट में दिया।

अमर शहीद संत रामानन्द महाराज जी

संत रविदास जी के अनुयायी, शहादत देने वाले महान शहीद श्री 108 संत रामानंद महाराज जी को नहीं भूल सकते। मंदिर में इनकी तस्वीर भी लोगो को इनका कौम के प्रति बलिदान याद दिलाती है। अमर शहीद रामनंद महाराज जी ने अपने कुशल नेतृत्व के द्वारा कौम को मार्ग दिखाया था। ये अत्यंत कुशलता पूर्वक चलाया और उसके माध्यम से चलने वाली बहुत से सेवाओं का कार्य निर्देशित किया। साथ ही उन्होंने संत रविदास जी महाराज की वाणी का प्रचार किया और देश–विदेश में रैदासिया कौम को रविदास की जीवन प्रेरणाओं से सदैव सिंचित करते रहे, यह पहली बार था कि महान संत ने U.K के संसदीय सदन में श्री गुरू रविदास महाराज जी से सम्बधित भाषण पढ़कर सुनाया जिससे इतिहास में उनका नाम सदैव लिया जाएगा। गुरू जी के उपदेश को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने अपना जीवन भी कुर्बान कर दिया गुरू रविदास जी का पावन उपदेश **"सति संगति मिलि रही है आधऊ जैसे मधुप भरवीरा।"** यह बोलकर वे विश्व स्तर पर सभी को साथ मिलकर रहने का संदेश देकर चले गए। उनके बलिदान की वीरता है जिससे उनहे हमेशा याद रखा जायेगा ।

अध्याय–6

निष्कर्ष

हमने अपने अध्ययन के तहत बहुत से जातिवाद के पक्षों पर नजर डाली तत्पश्चात् भी यह बता पाना मुश्किल हो गया कि वह देश जो अपनी महान संस्कृति परम्पराओं, प्राचीन शिक्षा नीति तथा महापुरूषों की भूमि रहा है वहां ऐसे भी कुकृत्य हुए है जिनको यदि हम और आप उस समय में हाते तो सहन कर पाना मुश्किल होता। वर्तमान में हम सभी प्रकार की सुख–सुविधाओं से सुसज्जित है तथा ऐसा नही है कि कहीं कोई ग्रामीण परिवेश का रहन–सहन बहुत ही निम्न हो, क्योंकि आज मनोरंजन के संसाधनो के चलते तथा नई–नई सरकारी योजनाओ के माध्यम से व्यक्ति अपनी जीविका को चलाने में अपने बच्चों को सही प्रकार से भरन–पोषण करने में और एक अच्छी शिक्षा दिलाने में सक्षम हो चुका है। आज भले ही व्यक्ति किसी भी जाति का हो, समाज में कैसी भी स्थिति में हो परन्तु फिर भी सरकार के समक्ष वह देश की जनसंख्या में ही गिना जाएगा और उसको योजनानुसार सुविधा भी दी जाएगी। हमारे वर्तमान ` प्रधानमंत्री द्वारा तो जन–धन योजना, उज्ज्वला योजना इत्यादि ऐसी कई योजना का शुभारंम किया है, जिसके माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी धर्म, जाति से सम्बधित हो, अपनी जीविका के लिए यदि शारीरिक रूप से सक्षम है तो उन्हे मौका दिया जाता है ताकि वे अपनी शरीरिक क्षमता द्वारा मेहनत–मजदूरी करके अपने परिवार का अच्छे से भरण–पोषण कर सके।

यह पक्ष तो वर्तमान का हो गया परन्तु फिर भी थीसिस के दौरान कुछ विशेष स्थानो पर आज भी ऐसे वाकिये देखने को मिलते है जिसको देखकर यह तय कर पाना मुश्किल लगता है, कि क्या आज भी सामाज में ऐसी मानसिकता वाले लोग है जिनके लिए इन्सान सिर्फ इन्सान लनकर नही रह सकता, उसको जाति धर्म के कठघरे में करना आवश्यक है और इतना ही नही यदि वह जाति से निम्न है तो उसके साथ व्यवहार कैसा करना है यह भी तय किया जाता है, इस स्थिति पर काम करते हुए समाज के ऐसे कई उदाहरण सामने आये जिनको अभी तक ` इतनी गहराई से समझा नही था आज और बीते हुए समय मे ऐसा कोई

व्यक्ति नही होगा जो इस बात से अनभिज्ञ हो, कि वो यह नहीं मानता कि सभी मानव एक ईश्वर की सन्तान है, हमारे महान उच्च वर्ग के लोग क्या इस बात से अनभिज्ञ थे? नही! वे यह जानते थे कि कोई भी धर्म कोई भी ईश्वर कोई भी संत इस बात का आदेश नही देते है कि आपको यह अधिकार है कि आप किसी अन्य मनुष्य को उसकी जाति कर्म के आधार पर प्रताणित करो, या समाज में शोषित होने वाली जाति के रूप में उसका तिरस्कार करों। परन्तु हम ऐसे उदाहरण वर्षों पूर्व भी देखते थे और आज भी रह–रह कर हमारे समक्ष ऐसे लोगो के कुकर्म सामने आते रहते है। आज भारत के किसी भी राज्य विशेष पर यदि नजर डाले तो यह शायद ही होगा कि हमें वहाँ जाति पर आधारित कोई भेदभाव देखने को न मिले और अब तो यह जाति आधिरित भेद–भाव का तरीका पुराने तरीको से भिन्न हो गया है, आज कोई ऐसा नहीं करता कि वह यदि उच्च वर्ग का है तो वह अपने से निम्न व्यक्ति के साथ बैठे न या उसके साथ भोजन न करे बल्कि सर्वप्रथम वह उसका पूरा नाम जानने का प्रयास करता है, ताकि वह इस बात से निश्चित हो जाए कि जिससे वह बात करने या दोस्ती करने जा रहा है वह किस जाति धर्म का है, उसके माता–पिता क्या करते हैं।

यह बाते सामान्य रूप में देखने में अजीब नहीं लगती है परन्तु सत्य और उसके पीछे हुआ करवा, यही बताता है कि जाति मनुष्य के कर्म से अधिक महत्वपूर्ण है।

प्राचीन समय में **मनुस्मृति** लिखी गयी। जिसमे समाज के उस वर्ग को इंगित किया गया था जो, निम्न है **अछूत** है, अस्पृश्य है, कुकर्त्य अर्थात निम्न काम को करने वाला है, जो अशीक्षित है मनुस्मृति में जो बाते कही गयी है उनको पढ़ना और समझ पाना किसी सामान्य मनुष्य के लिए खून का घुट पीने योग्य है। कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के लिए ऐसी मानसिकता कैसे रख सकता है यह समझ पाना अत्यन्त मुश्किल है। मनुस्मृति के अनुसार **"जिस राजा के यहाँ शुद्र न्यायाधीश होता है उस राज का देश कीचड़ में धसी हुई गाय की भाँति दुख पाता है"** (8/22–23) ऐसी मानसिकता से भरे कथनो को जिस पुस्तक में लिखा गया और जिस व्यक्ति ने इसे जिस समाज के लिए लिखा, क्या ये सम्भव हो सकता है, कि वह समाज प्रगति करें? कदापि नहीं। ऐसा असम्भव है, जहाँ योग्यता और व्यक्ति के

सक्षमता से अधिक उसके जाति को महत्व दिया जाता हो वह देश नगर और उसके निवासी कभी भी प्रगति नही कर सकते और न ही कभी अपने से जुडे लोगो का सही मार्ग दर्शन कर सकते है। मनुस्मृति को हमारे देश मे वेदो के बाद उच्च स्थान मिला है यह भी कहा गया है कि **वेदत्रयी** के बाद एक सम्पूर्ण धर्मशास्त्र के रूप में लोगो को इसका सम्मान करना चाहिए, जबकि मनुस्मृति हमें सिखाती है कि ब्राह्मणों की सेवा करना ही शुद्रो का मनुष्य कर्म है इसके अतिरिक्त यह शूद्र जो शूद्र का मुख्य कर्म कहा गया है इसके अतिरिक्त वह शुद्र जो शुद्र जो कुछ भी करता है उसका कर्म निष्फल हाता है (10/123–124) यह मानसिकता किसी शूद्र को आत्मविश्वास को तोड़ने और उसे समय–समय पर क्षीण करने के लिए काफी है। जो व्यक्ति अपने ही जैसे दिखने वाले व्यक्ति के लिए ऐसी मानसिकता रख सकता है वह व्यक्ति किसी अन्य जानवर को भी इससे अधिक दे सकता है। और ऐसी विकृत सोच समाज का उद्धार तो कभी नहीं कर सकती । परन्तु अफसोस यह है, कि आज के समय में भी बहुत से ऐसे महान व्यक्ति है जो इस कुकृत्य को सही समझते है, वे अपने मुँह से यह कहते है, कि यदि **"आज भारत देश में संविधान सर्वोपरि न होकर मनृस्मृति को मान्यता दी जाती, तो देश दिन–दुगनी रात चौगुनी प्रकृति करना।"**

यह विचारधारा आधुनिक समय में भी देखने को मिलती है जब लोग आज भी किसी व्यक्ति को इसलिए मारते है, कि वह दलित होते हुए ब्राह्मणों की लाइन में कैसे लग गया। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, केरल यह सभी राज्य वे है जहाँ से रह–रहकर ऐसी घटनाएँ सामने आती रहती है, कभी किसी दलित युवती को बलात्कार का शिकारी बनाकर उसे नग्न अवस्था में पेड़ पर लटका दिया जाता है तो कभी किसी दलित युवक को उसकी शादी में घोड़ी पर चढ़ने के अधिकार से वंचित कर मार डालने तक की धमकी दी जाती है, कभी शिक्षा में प्राप्त आरक्षण को लेकर नीचे दिखाया जाता है तो कभी किसी ऊँचे कुल में गए व्यक्ति के निरादर व उसे जमीन पर बैठाकर पानी देना, दूसरे बर्तनों को इस्तेमान करना। जैसी घटनाएँ तो हमारे समाज में आम हो गयी है। ये सभी किसी सभ्य और शिक्षित देश की तस्वीर हो ही नहीं सकती है यह वास्तविकता भले ही सुनने में कड़वी लगे परन्तु हमारे दलित पूर्वजो और उनके परिवार इस कुकृत्य मानसिकता का सामना कर

चुके है। मनुस्मृति का समर्थन करने वाले लोगो की कमी आज भी नहीं है, यही कारण था कि अम्बेडकर जी और उनके सहयोगियों ने मनुस्मृति को जलाया, उनके ऐसा करने का उद्देश्य यह नही था कि वे मात्र एक कागज के टुकडे को जला रहे थे। बल्कि वे उस सोच को जला रहे थे जो व्यक्ति के दुसरो के प्रति शोषण और हीन भावना को जन्म देती है। वे उस मानसिकता का नाश करना चाहते थे जो दलितो को कभी अपने आप को सक्षम और शिक्षित करने के लिए प्रेरित नहीं करती बल्कि उसे हमेशा नीच जाति का होने का दुख देती। नीच कुल में जन्मे व्यक्ति कभी भी नीच काम करे यह आवश्यक तो नही और न ही नीच कुल, दलित, निम्न जाति ये सभी किसी व्यक्ति के बनाए है, और हमे उसकी इस विचारधारा को मानना है या नही ये माने तो क्यों? ये सभी वे प्रश्न है जो हमें एहसास दिलाते है कि वे महापुरूष जिनके विषय में यह कहा गया है कि हमारे ऋग्वेद मे आदिपुरूष के मस्तिष्क से बाह्मण का जन्म हुआ है उसकी भुजाओं से वैश्य ने जन्म लिया तथा उसकी जंधाओं से वैश्य ने जन्म लिया तथा उसकी पैर के अंगूठे से शुद्र का जन्म हुआ, और क्योंकि शुद्र पैर के अंगूठे से जन्मा है तो वह अपने से ऊपर के सभी व्यक्तियों की सेवा–सत्कार करेगा, उनके दिये काम करेगा, खुद भूखा सो गया परन्तु उनके लिए अन्न का प्रबंध करेगा।"

यह सब जानकर ऐसा प्रतीत होता है मानो किसी ने जानबूझ कर स्वयं को ऊँचा दिखाने और हमेशा ऊँचे शिखर पर विराजमान रहने के लिए ऐसा किया है। ये वर्ण व्यवस्था ऋग्वेद मे लिखी गयी। ऋग्वेद को किसी भगवान ने नहीं बल्कि किसी हमारे–आपके जैसे उसी शरीर कद–काठी वाले व्यक्ति ने लिखा है फिर भला इसे व्यक्ति क्यों माने जो वह लिख कर स्वयं को सर्वोच्च और अन्य जाति को नीच कहता है।

प्रचीन समय में शूद्रों और स्त्रियों दोनों को ही यह वेदना सहन करनी पड़ी मनुस्मृति के साथ–साथ कुछ अन्य स्त्रोतो में भी स्त्री को संभोग की वस्तु कहना गलत नहीं माना गया है, यहाँ तक की यह भी धारण है कि– स्त्री अपने छल से किसी भी योगी पुरूष तक को छल सकने की काबिलियत रखती है इसलिए स्त्री को हमेशा पुरूष की अधीन चहार दीवारों के अन्दर रहना चाहिए। अपने वह अपने

जन्म से पिता के द्वारा, यौवन मे पति के द्वारा तथा अपनी वृद्धा अवस्था में अपने पुत्र द्वारा सुरक्षा प्राप्त करने की अधिकारी होती है।

ऐसा नहीं है कि स्त्रियों को प्राचीन काल के हर काल खण्ड में इसी प्रकार की हेय दृष्टि का सामान करना पड़ा है। कही–कही हम विदुषी महिलाओं जैसे– गार्गी लोपा इत्यादि अत्यन्त महान स्त्रियों के विषय में भी पढ़ते हैं। ऋग्वेद में ही एक स्थान पर यज्ञ की कार्य पुष्टि तब तक सम्भव नहीं मानी गयी है जब उसे पुरूष और उसकी पत्नी दोनो मिलकर सम्पन्न न करे।

परन्तु समाज के बदलते रूख ने और शोध अध्ययन ने प्राचीन समय से आज तक जहाँ स्त्रियों के बदलते स्वरूप के समझने का मौका दिया, वही यह भी बताया कि स्त्रियाँ पहले भले ही घर में रख देने से सुरक्षित माननी जाती थी। परन्तु आधुनिक समय में अर्थात् आज स्त्री की स्थिति बद से बदतर हो गयी है। वह अपने ही घर में अपने पिता, भाई रिश्तेदारों पडोसियों कर्मचारियों, शिक्षक, डॉक्टर सभी के द्वारा प्रताड़ित की जा रही है। भले ही हम आज यह कहे कि आज की नारी की स्थिति पहले से बहुत बदल चुकी है परन्तु सच यह है कि हम कुछ एक ही पक्ष को लेकर कहते है जैसे यदि वह आज नौकरी करने लगी है तो उसकी स्थिति अच्छी हो गयी है। जबकि ऐसा नही है क्या वो सुरक्षित है? घर में और घर के बाहर कही भी। 2018 के नव वर्ष के समय दक्षिण भारत के एक शहर में जब सभी नव वर्क्ष के आने की खुशियाँ मना रहे थे तब आयोजन में उपस्थित छेड़–छाड, दुर्त्यवहार लड़कियो के साथ गलत हरकते बत्तमिजी और रेप जैसे केस एक ही रात में सामने आए थे, यह कौन सा अधिकार है? एक जगह तो आप उन्हें यह आजादी दे रहे हो, कि वे भी अपने मनोरंजन के लिए घर से बाहर रात में आ जा सकती है वही आप दूसरी तरफ उनकी सुरक्षा के साथ ऐसा घिनौना खेल खेल रहे है यह किसी सभ्य और शिक्षित परिवेश के लोग नहीं हो सकते है।

दलित (शूद्र) और स्त्रियों के प्रति हमारे समाज का ऐसा व्यवहार निन्दनीय है और किसी भी प्रकार से माफी के लायक नहीं है। लोग को यह समझना चाहिए कि कोई भी मनुष्य चाहे वह किसी भी लिंग, सम्प्रदाय जाति का क्यों न हो, हमें मानव से मानव का रिश्ता कभी नहीं भूलना चाहिए और यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि जो ज्ञान हम आज ले रहे है जिस प्रकार का समाज हम आज बना रहे है, कल

को हमारी आने वाली पीढ़ी भी उसी को आगे लेकर जाएगी और समाज रूपी गाड़ी दो पहियों के बराबर मिलकर चलने से आगे बढ़ती है न कि किसी को कम ज्यादा मानकर धिक्कार करने से।

हमने यह पढ़ा और जाना भी है कि मानवता का सम्बंध सर्वोच्य होता है। किसी भी ऐसे नियम–कानून को मान लेने से कोई व्यक्ति अपनी स्वयं की सोच को कमतर कैसे समझ सकता है? क्या हमें कोई कुछ भी सीखा–पढ़ा देता है तो हम उसी मनुष्य की तरह व्यवहार करने लगते है? ऐसा नहीं है क्योंकि हम स्वयं का मस्तिष्क रखते है जो सही–गलत में अन्तर जानते है। ऐसे मे वेद–पुराणों की कही हुई ऐसी समान्य बातो और रूढिवादि सोच को आगे ले जाने के बजाय इस पर तर्क वितर्क द्वारा अपने बुद्धि–बल का उपयोग करके सही निष्कर्ष निकालना चाहिए।

एक अत्यन्त महान व्यक्ति के द्वारा अपना हिन्दू धर्म त्याग कर बौध धर्म को अपनाना कोई बिना सोचे समझे किया जाने वाला कार्य नही था।

बौध धर्म के विषय में यदि जाने तो सीधे शब्दों में एक ही सही कथन समझ में आता है कि संसार में कोई भी व्यक्ति किसी के अधीन नही है प्रत्येक को अपना जीवन स्वंय निर्वाह करना पड़ता है न कोई छोटा है न कोई बड़ा , न कोई उच्च न कोई निम्न। यह संसार सभी को बराबर प्राकृतिक सुविधाएं और संसाधन देता है और संसार में यदि इसके आधार पर भी कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य को शारिरिक व मानसिक हानि पहुॅचाता है तो वह अपराधी है। जीवों का दूसरे जीव को भक्षण करना मानवता नही है, यह कार्य अमानवीय है।

भगवान बुद्व ने लोगो को **मध्यम मार्ग** का उपदेश दिया। उन्होंने दुख, उसके कारण और निवारण के लिये **अष्टागिंक मार्ग** सुझाया। वे जानते थे कि अत्यन्त कठिन मार्ग का अनुसरण व्यक्ति हमेशा करे, यह सम्भव नही है और अत्यन्त सरल मार्ग उसे आवश्यक नही है कि सही दिशा तक पहुचा सकें इसलिये मध्यम मार्ग व्यक्ति को भगवान से जोड़े रखने के लिये उचित समझा।

जिस प्रकार बाबा साहब भीम राव अम्बेडकर जी ने निकाला था, हम सभी पहले के अंको मे उनके जाति भेद के विरोध में किए गए कार्यो पर अच्छे से विचार कर चुके है, कि वे स्वयं जिस जाति से सम्बधित थे वे जान गए थे उस जाति में

रहकर भले ही वे अत्यन्त उच्च शिक्षित व्यक्ति हो गए थे फिर भी वे जातिवाद के घेरे से नहीं निकल पाए थे। जहाँ विदेशो मे उन्हे Best student का अवार्ड दिया गया था उनके लेखो को लोगो ने प्रशंसनीय कहा था तथा इतनी गहरी सोच और दूरदर्शिता रखने वाले व्यक्ति को लोगो ने सम्मान दिया था, जहाँ अच्छे से अच्छे सक्षम लोग विदेश में शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाते थे वहाँ एक महार जाति के बालक ने अपनी बुद्धि के ज्ञान के कारण जीवन में शिक्षा को ग्रहण किया। उस व्यक्ति का ऐसा हीन निरादर सिर्फ उस व्यक्ति का ही नहीं बल्कि उसकी शिक्षा का भी निरादर था, यही कारण था कि भीम राव अम्बेडकर ने लोगों का जगाया उन्हे यह एहसास दिलाया कि यह समाज तुम्हारा शोषण कर रहा है और यदि तुम सही समय पर नही जागे तो एक दिन तुम स्वयं को खो दोगे कोई यहाँ न तुम्हारा नाम लेने वाला होगा न तुम्हारा वंश ही बचेगा। यह उच्च हिन्दू समाज तुम्हारे पूर्वजो को जिस प्रकार दीन–हीन बताकर गर्त मे डाल गए, उसी प्रकार तुम स्वयं भी अपने आने वाली सन्तान के लिए ऐसा ही तिरस्कार से भरा कुआँ खोद रहे हो, ताकि वो और उसकी आने वाली पीढ़िया, सभी ऐसे ही गर्त मे गिरकर स्वयं को कभी शिक्षित न कर पाए और न ही कभी अपने काम के प्रति गर्व कर पाए। क्योंकि ये उच्च वर्ग कभी चाहता ही नही है कि कोई भी दूसरा उनका स्थान ले। ऐसे मे वे तो हमें स्वयं नहीं कहेगे कि तुम पढ़ो और आगे बढ़ो बल्कि हमे स्वयं अपनी दासता वाली मानसिकता का त्याग कर एक उज्ज्वल भविष्य की ओर कदम बढ़ाना होगा और शिक्षा ही वह मार्ग है जो हमें हमारे अधिकारों को जानने का हक देता है तथा अधिकारों के लिए लड़ने का हक देता है।

डॉ. अम्बेडकर राजनीतिक चेतना के प्रतीक भी थे, वे राजनीति को स्वार्थ–सिद्धि का नही वरन् जन–जागरण का अस्त्र मानते थे उनकी यह स्पष्ट मान्यता थी कि राजनीति को ऐसे हथियार के रूप मे इस्तेमाल किया जाना चाहिए। जिसमें समाज के दलित विपन्न और शोषित लोगों का कल्याण निहीत हो, उन्हे स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए ताकि उन्हें उन्के अधिकार दिलावाए जाने चाहिए, उनकी भावना को व्यक्त करने उनकी बंद और अवरूद्ध वाणी जो किसी न किसी डर और शर्म के कारण बंद हो चुकी है उसमे स्वर पैदा करना ही वे राजनीति मानते और

कहते थे। चूकि वे स्वयं भी ऐसे परिवेश मे पले बड़े थे जहाँ बोलने और विरोध करने पर दण्ड दिया जाता था इसलिए उन्होंने सर्वप्रथम इसी क्षेत्र मे काम करना शुरू किया । छिछली गंदी और उठा–पटक की राजनीति के वे कट्टर विरोधी थे। उन्होंने कहा था "किसी समुदाय के जीवन में राजनीतिक शक्ति का महत्वपूर्ण स्थान है मुख्यतः उस समय जब उस समुदाय को चुनौती दी जा रही है, उस समुदाय को इस चुनौती का सामना करना चाहिए, क्योंकि ये उसकी पीढ़ियों तक काम आने वाली चुनौती होगी जो उसके बाद के लोगो को प्रेरित करेगी। राजनीतिक शक्ति ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा वह अपनी स्थिति बनाए रख सकता हैं क्योंकि राजनीति ही वह मंच है जो अपने समक्ष लोगो को अपनी बात सुनाने और कहने के लिए बाध्य कर सकती है राजनीति के माध्यम से ही देश का आइना बदला जा सकता है। राजनीति लोगो को अधिकार दिलाती है, राजनीति देश के लोगो को और देश को उचित दिशा प्रदान करती है उन्होने अपने बात को इन शब्दों मे भी व्यक्त किया था कि "राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए लोगों को दोषपूर्ण साधनो का प्रयोग नही करना चाहिए।" उन्होंने राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से गलत प्रचार वोट लेने इत्यादि के लिए धन का प्रयाग तथा उदण्डता की राजनीति के लिए हानिकर निरूपित किया था।

इन बातो से हम यह देख सकते है कि इतने अत्याचारों को सहने के बाद भी उन्होने दलित और शोषित जनता को हिंसा का मार्ग नहीं दिखाया बल्कि वो मार्ग दिखाया जिसके माध्यम से वे (शोषित वर्ग) अपने आज के साथ –साथ कल को भी उज्ज्वल कर सके। वे उन्हे शिक्षित करने के लिए प्रेरित करते थे राजनीति में आने के लिए प्रेरित करते अनेक अधिकारों से उन्हे अवगत कराते । **उन्होनं जनतंत्र की बात कही है, वे एकता के महत्व को समझाना चाहते थे।** यह कारण था कि वे जिस स्वप्न को देख रहे थे वह साकार हुआ।

आरक्षण एक बड़ा मुद्दा है कुछ लोग इससे सहमत है तो कुछ नहीं है परन्तु मैं अपने विचारो के आधार पर यह जरूर कहना चाँहुगी कि कोई भी देश आरक्षण की मांग तब तक नही करता जब तक उसके साथ भेद भाव न किया जाए, जब वह अपने लिए समाज के ऐसे कडे–नियमो को देखता है जहाँ उसे खाने–पीने के लिए भी दूसरो की जूठन पर निर्भर रहना पड़े उस देश को दिशा देने और उस वर्ग

विशेष के खोए हुए अधिकारों को वापस लाने के लिए आरक्षण एक आवश्यक कदम हैं अम्बडेकर जी ने भी आरक्षण की बात यही विचार करके की थी वे अपने **पूना समझौते** मे सीटों को बढ़ाने पर मान गए थे उनका बस यही कहना था कि उनके लोगो को वो स्थान मिले जिस पर आज तक उसने अपना हक नही मांगा है परन्तु देश का नागरिक होने के नाते वो हक उसका अधिकार है। इनका उद्देश्य भी रविदास जी से भिन्न नहीं था, परन्तु ये भगवान पर विश्वास नहीं करते थे अर्थात् ये दलितों की स्थिति का एक मुख्य कारण ब्राह्मणों की भगवान प्रिय होने की भावना को मानते थे। परन्तु इनका उद्देश्य शुद्रों को समाज में उच्च स्थान दिलाना नहीं बल्कि समानता का अधिकार दिलाना था,

इस प्रकार अम्बेडकर जी के अथक प्रयासो ने हमें संविधान जैसा मजबूत स्तम्भ दिया जिसने देश को एक विचार धारा में जोड़ने का प्रयास किया। सभी के लिय न्याय, समानता, स्वतंत्रता की माँग की उन्होंने किसी वर्ग विशेष के हाथों मे शक्ति को नहीं रखा और न ही शोषित वर्ग को खैरात के रूप में बांटा उन्होने कहा "जो योग्य होगा वो सक्षम बनेगा।"

डॉ. अम्बेडकर जी जिस प्रकार आधुनिक समय में हमारे गुरू के रूप मे जाने गए उसी प्रकार हमारे ऐसे और भी महान पुरूष संत थे जिन्होंने बुद्ध की भाँति तथा स्वयं के ज्ञान के प्रकाश से हमारे जैसे कई व्यक्तियो का मार्गदर्शन किया। हम अपनी थीसिस मे संत रविदास जी का उल्लेख भी कर चुके है। निष्कर्ष रूप मे उनके लिए यह कहना उचित होगा कि वे ईश्वर से जुड़कर मनुष्य को अपने कर्म के प्रति आदर करने का और जाति के आधार पर भेद–भाव न करने का संदेश देते थे।

संत रविदास जी महाराज

प्रोफेसर रोंकी राम "संत रविदास" उत्तर भारतीय भक्ति आंदोलन के एक अछूत संत–कवि थे। जिन्होंने एक अलग दलित पहचान के निर्माण , आत्मसात और कट्टरपंथी अलगाववाद के बीच एक मध्य मार्ग प्रस्तुत किया। पंजाब के सबसे लोकप्रिय रविदास डेरों में से एक डेरा "सच्च खंड बल्लन" ने राज्य में एक अलग दलित पहचान के मार्करों को चुनकर इस मार्ग को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रोफेसर रोंकी राम के अनुसार "पंजाब में मुख्यधारा के गांवों के आसपास के क्षेत्रों में दलित परिधि अब पड़ोस के लिये कलंकित नहीं हैं।" इसके विपरीत, वे तेजी से दलित सामाजिक विरोध और जोर के महत्वपूर्ण स्थल बन रहे हैं। कुछ समय पहले तक इन परिधियों को गरीबी, गंदगी और बीमारी के रूप में चित्रित किया गया था, जिसमें कोई चुनावी अंतराल नहीं था, सिवाय छोटे चुनावी अंतराल के या गुरु रविदास और बीआर अंबेडकर की वर्षगांठ के वार्षिक उत्सव के अलावा। अक्सर उन्हें अनदेखा किया जाता है, वे मुख्यधारा के गांवों के कचरे के निपटान के

लिए विभिन्न सस्ते मैनुअल श्रम और डंपिंगग्राउंड के साथ मूक सेवा क्षेत्र बने रहे। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में, रविदास की एजेंसी ने उन्हें "एक अलग दलित पहचान का दावा करने और सत्ता की स्थानीय संरचनाओं में हिस्सेदारी की मांग करने का अधिकार दिया है।"[1]

वाराणसी में स्थित रविदास मंदिर ने दलितों में एक अलग दलित पहचान के निर्माण के लिए खास योगदान दिया है। वे अपने विरोधियो की अज्ञानता को दूर करने के लिए ज्ञानमार्गी संदेश देते थे स्वयं भी चमार जाति से जुड़े हुए होकर लोगों को समानता तथा स्वतन्त्रता का मार्ग दिखया।

परन्तु रविदास मंदिर की भी अपनी एक मार्मिक संघर्ष की दास्ताँ रही है। 14 जून 1965 को आषाढ़ की संक्रांति के दिन श्री 108 संत हरिदास जी के कर कमलों से मन्दिर की नींव रखवायी गयी। मन्दिर के निर्माण में सबसे प्रमुख बाधक शंकर दास नामक एक व्यक्ति था। जिसने मन्दिर निर्माण में बाधा पहुचाने का हर सम्भव प्रयास किया। कई ऐसे वाकिये भी हुये जो रैदासियों की हिम्मत तोड़ देते थे । मन्दिर निर्माण के लिए पैसा डेरे से आता था, क्योंकि यहाँ स्थानीय मदद मिलना अत्यन्त मुश्किल था। ऐसे में लोगों के पैसो को बचाकर रखना तथा सेवाकारों की सुरक्षा भी एक बडा विषय था। दंगों का खौफ इतना कि सेवाकार पंजाब से बनारस आते थे और दिन भर मन्दिर बनाने में अपनी सेवा देने के बाद रात मे ही वापस पंजाब लौट जाया करते थे। अगले दिन नये लोग पंजाब से आते थे और अपनी सेवा देते थे।

मन्दिर के निर्माण का कार्य संत हरिदास जी ने संत गरीबदास जी के साथ संगत भेजकर कराया जिसमे संघर्षरत सेवाकारों को बलिदान भी देना पड़ा यह कार्य जितना सुनने में कठिन लग रहा था वास्तव में उससे भी कहीं अधिक मुश्किल था। परन्तु संत रविदास जी के आर्शीवाद के कारण ही लोगों को यह हौसला मिला, कि वे पूरी निष्ठा के साथ मन्दिर निर्माण के कार्य को पूर्ण कर पाये।सन् 1972 में मन्दिर के निर्माण का पहला चरण पूर्ण हुआ। इस भव्य समारोह में संत गरीबदास जी ने मन्दिर

[1] Ronki Ram,Ravidass Deras and Dalit Assertion in Punjab-**Sacralising Dalit Peripheries**, Vol. 51, Issue No. 1, 02 Jan, 2016

के गर्भ गृह में संत रविदास जी की मूर्ति को स्थापित कराया। यह सभी रैदासिया समाज और इन सभी लोगों के लिए हर्षोउल्लास का समय था जब उनके गुरू को मन्दिर में स्थिपित करके मन्दिर निर्माण का कार्य पूर्ण किया गया।

मन्दिर निर्माण का दूसरा चरण 1993 में पूर्ण हुआ और इसी के साथ–साथ 7 अप्रैल 1994 में बाबू काशीराम जी के द्वारा मन्दिर के ऊपरी भाग में एक स्वर्ण कलश स्थापित किया गया।

10 जुलाई 1998 में हमारे देश के पूर्व राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायण जी के कर कमलो से वाराणसी स्थित लंका नामक स्थान पर एक पत्थरों से निर्मित विशाल गेट का निर्माण हुआ जो रैदासिया कौम के लिए अत्यन्त भाव–विभोर करने वाला समय था।

सतगुरू स्वामी गरीबदास जी ने पत्रिका के महत्व को समझा और समाज में चेतना फैलाने के लिए पत्रिका की भूमिका को उपयोगी माना। समाज को एक महान उपहार प्रदान किया और साप्ताहिक 'बेगमपुरा शहर पत्रिका' जिसके द्वारा समाज की सेवा और सत्कार हो रहा है, का सम्पादन किया।यह बहुत गर्व की बात है कि यह पत्रिका तीन भाषाओं पंजाबी, हिन्दी और अंग्रेजी में छपने लगी है।

यात्रियों और सेवाकारों की सुविधाओं और संत रविदास जी के दर्शन के लिए को अधिक से अधिक लोग उपस्थित हो सके। इसके लिए लोगों ने अथक प्रयास किया और बेगमपुरा एक्सप्रेस नामक ट्रेन को चालू कराया।यह सुपरफास्ट एक्सप्रेस वाराणसी जंक्शन से शुरू होकर जम्मूतवी तक जाती है। ट्रेन का सफर अपने आप में ही रविदास भक्ति के प्रति लोगों का आकर्षण और प्रेम दिखाता है। रविदास जी के स्वप्न को धीरे–धीरे साकार करना ही सेवाकारो, खण्ड के लोगो और डेरे का कार्य है।

संक्षिप्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पंजाब का आदि धर्म भी अलगाववादी आन्दोलन थाए यह उल्लेखनीय है कि उन्नीसवीं सदी के दशक में आदि धर्म आन्दोलन भी हिन्दू धर्म तथा सिख धर्म से एक विद्रोह था और आदि धर्म की स्थापना तथा संत रविदास की एक गुरु के रूप में

स्वकृति द्वारा पंजाब के दलितों में एक नई पहचान प्राप्त हुई थी , संत सरवण दास जी, हरि दास जी, संत गरीब दास जी तथा वर्तमान गद्दी नशीन संत निरंजन दास जी के विषय में बलिदान और त्याग की भी जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रविदासिया धर्म भी पूर्व के धर्म से भिन्न नहीं है और न ही इसमें किसी क्रान्तिकारी अवधारणा का समावेश किया गया है जो कि वर्तमान की धार्मिक तथा सामाजिक स्थितियों का को एक सूत्र में पिरो सकता है। आज जिस प्रकार से देश–विदेश मे उनके अनुयायी उनके ज्ञान का प्रसार कर रहे है, उनकी वाणी और उद्देश्यो को जिस प्रकार से व्यक्ति स्वयं के जीवन का लक्ष्य मानकर उसको पूरा कर रहा है उसे देखकर हम यह कह सकते है कि रविदास जी का ज्ञान खाली नहीं गया। उन्होने मानवता और एकता का जो संदेश दिया वह प्रत्येक व्यक्ति ने अपने मन मस्तिष्क में ऐसा समाहित किया है कि वह न तो स्वयं किसी प्रकार का भेदभाव करते है और न ही ऐसा ज्ञान देते है रविदास जी स्वयं चमार जाति से थे, वे जूता सीते और उसी से अपनी आजीविका चलाते उन्होने उससे ज्यादा की कभी इच्छा नही कि परन्तु वे यह हमेशा चाहते थे कि संसार भेदभाव से रहित रहे वे कहते थे– जो भी जीव इन बंधनो से मुक्त है, वह शूद्र है। वही मेरा मित्र है और मेरा हमशहरी है।

सन्दर्भ सूची

प्राथमिक स्त्रोत

1. वाराणसी स्थित संत रविदास महाराज जी के मन्दिर के दर्शन एवं भ्रमण पर आधारित

    1. ग्रभ गृह का भ्रमण

    2. मन्दिर व्यवस्था के दर्शन

2. साक्षत्कार पद्धति पर आधारित

    1. प्रत्यक्ष साक्षात्कार के माध्यम से

    2. दूरभाष आधारित साक्षात्कार के माध्यम से

3. बेगमपुरा पत्रिका

साक्षात्कार पद्धति– प्रत्यक्ष साक्षात्कार

1. सेवाकार गुरूदेव जी वाराणसी 10 अप्रैल मन्दिर के अन्दर सुबह 11:00 बजे
   मन्दिर के गृभ ग्रह में
2. सेवाकार सुखवीर सिंह वाराणसी 10 अप्रैल सुबह 11:30 बजे
   लंगर हॉल
3. सेवाकार मनप्रीत सिंह वाराणसी 10 अप्रैल सायंकार 4:30 बजे ।
4. पुस्तक विक्रेता सुनील मन्दिर के बार वाराणसी 10 अप्रैल सायंकाल 4:00 बजे।
5. सेवाकार अमरप्रित मन्दिर के बाहर वाराणसी 11 अप्रैल सुबह 8:00 बजे।
6 सेवाकार अमृत कौर लंगर हॉल वाराणसी 11 अप्रैल सुबह 10:30 बजे।

7 भक्त श्री मती मनप्रीत कौर निवास हॉल वाराणसी 11 अप्रैल दोपहर 12:00 बजे।

8 भक्त श्री मती सुखी निवास हॉल वाराणसी 11 अप्रैल सायंकाल 4:00 बजे।

9 सन्तोष यादव रविदास घाट वाराणसी 11 अप्रैल सायंकाल 5:00 बजे।

10 भक्त सरिता देवी रविदास घाट 11 अप्रैल सायंकाल 5:00 बजे।

11 सेवाकार अभय सिंह निवास हॉल वाराणसी 11 अप्रैल सायंकाल 7:00 बजे।

12 शिवराज यादव मंदिर का प्रांगण वाराणसी 11 अप्रैल रात्रि 7:30 बजे।

13 कोमल रानी निवास हॉल वाराणसी 12 अप्रैल सुबह 7:30 बजे।

14 पुस्तक विक्रेता महेश सोनी, लंका बाजार वाराणसी 12 अप्रैल सुबह 8:00 बजे।

पुस्तक :–

(1) 'अमृतवाणी ' सतगुरु रविदास महाराज जी (सटीक) टीका कार संत सुरिन्दर दास बाबा जी।

(2) भारत रत्न बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर लेखक सूर्य नारायण त्रिपाठि।

(3) श्री गुरु रविदास जीवन चरित्र और रविदास वचनामृत लेखक योगी धर्मनाथ भिक्षुक।

(4) भारत भारती लेखक श्री मैथिलीशरण गुप्त।

(5) मेरे सपनो का भारत लेखक महाँत्मा गॉधी।

(6) प्रचीन भारत का इतिहास तथा सस्कृति लेखक कृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव।

(7) डॉ. भीम राव अम्बेडकर ,'काग्रेस और गॉधी ने अस्प्रश्यो के लिए क्या किया '

(8) शतपत बाह्मण

(9) कितना सच हुआ दलितो के लिए भीमराव अम्बेडकर का सपना – द इण्डियन वायर

(10) The Ultimate Place of Pilgrimage

(11) n LVMh vkWQ fgUnwbUte] n ;wfuoflVhZ vkWQ lkmFk dsjksyh;k izslA

(12) Hkxr jfonkl th

(13) Xkksnku ys[ku izsepUnz

(14) Hkhe jko vEcsMdj ^'kwnz dkSu gSA^

(15) Tkfr dk fouk'kd Mk¡- Hkhe jko vEcsMdj

lkf=dk, ,ao lekpkj i=

(1) बेगमपुरा पत्रिका –

(i) मसिक

(ii) वार्षिकी

(2) छलित दस्तक पत्रिका

(3) अमर उजाला

(4) पंजाब केसरी

(5) हिन्दूस्तान

(6) दैनिक भास्कर

(7) पंजाब सम्प्रदाय नए धर्म की घोशणा करता है। 'द टाइम्स ऑफ इण्डिया 1 फरवरी 2010

टेलीविजन के माध्यम से–

(1) दलित दस्तक विशेष साक्षात्कार

(2)सत्यमेव जयते, स्टार प्लस

(3)डॉ. भीम राव अम्बेडकर विशेषांक आज तक

वेबसाइडः–

(1) विकीपिडिया

(2) http://navbharattimes,indiatime.com

(3) http:// hi.m.wikipedia.org

(4) kashikatha.com

(5) http:// m. patrika.com

(6) http:// m. youtube.com

(7) http:// m. patrika.com

Two Days National Seminar on
Problems of Caste in India: Investigating History and Historiography

Department of Medieval & Modern History
University of Allahabad

Indian Council of Historical Research

Ministry of Social Justice and Empowerment (Govt. of India)

University of Allahabad Prayagraj

Indian Council of Social Science Research
Regional Centre, New Delhi

CERTIFICATE

This is to certify that

आरती शर्मा

has chaired/participated in technical session/ panel discussion & presented/ delivered/ special lecture/ distinguished lecture on

संत रविदास जीवन चरित्र एंव जातिवाद

in the National Seminar held at North Hall, University of Allahabad sponsored by ICHR, ICSSR and Ministry of Social Justice and Empowerment on 29th and 30th November 2018.

Prof. Yogeshwar Tewari
Head , Medieval & Modern History

Dr. Alok Prasad
Organizing Secretary

Dr. Vikram Harijan
Seminar Convener